यन्त्र शक्ति

YANTRA SHAKTI

दुर्लभ यन्त्र एवं उनके व्यावहारिक प्रयोगों का अनूठा संग्रह

10-3

यन्त्र-शक्ति

(YANTRA-SHAKTI)

[महत्त्वपूर्ण यन्त्रों का अनूठा संग्रह]

प्रथम भाग

लेखक

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी एम० ए०

पी-एच० डी०, डी० लिट्०

साहित्य-सांख्ययोग-दर्शनाचार्य

रंजन पब्लिकेशन्स

16, अन्सारी रोड, दरियागंज

नई दिल्ली-110002

प्रकाशक :
रंजन पब्लिकेशन्स
१६, अन्सारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली-११०००२

फोन : ३२७८८३५

संशोधित संस्करण : १९९३

मुद्रक :
गोयल प्रिन्टर्स,
दिल्ली-११००३२

दो शब्द

हमारी भारत-भूमि का मानव-समाज जिस प्रकार भाषा, भूषा और अन्यान्य विषयों में विविधता को बनाए हुए भी भारतीय संस्कृति की एकरूपता का पूर्ण उपासक बना हुआ है उसी प्रकार आस्तिक वर्ग भी भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों में दीक्षित होते हुए भी मंत्र, तंत्र और यंत्रों में एक समान विश्वास रखता आया है। लौकिक साधनों को प्राप्त कर लेना ही उसका अन्तिम लक्ष्य नहीं हैं, अपितु परलोक को सुधारने का भी उसको पूरा ध्यान है। अतः जो कार्य परिश्रम और प्रयास से सिद्ध हो जाते हैं वे तो लौकिक प्रयत्नों के द्वारा साध लिए जाते हैं; किन्तु पारलौकिक परमार्थ की सिद्धि के लिए उपासना का आश्रय अवश्य लिया जाता है।

विशेषता यह है कि यदि उपासना से ही दोनों प्रकार के—लौकिक और पारलौकिक कार्य सिद्ध हो जाते हैं तो वह इधर-उधर क्यों भटके? यही सोचकर पूर्वाचार्यों ने 'एका क्रिया द्व्यर्थकरी प्रतिष्ठा' इस उक्ति को चरितार्थ करते हुए मंत्र-तंत्र-यंत्रादि की उपासना का विस्तार किया है।

यंत्र इनमें अति महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। यन्त्रों की उपासना में मन्त्र और तन्त्रों का भी समन्वय हो जाता है। यन्त्र विद्या के प्रति प्राचीन काल में पर्याप्त श्रद्धा थी, इसका विधिवत् प्रयोग होता था और उपासना द्वारा यन्त्रों को सिद्ध करके बड़े से बड़े कठिन कार्य सरल बना लिए जाते थे।

आज इस ओर हमारा ध्यान नहीं है और यदि ध्यान देते हैं, तो व्यवस्थित पद्धतियों का ज्ञान न होने से उसमें सफलता नहीं मिलती। कुछ लोग ऐसी पवित्र विद्या को व्यापार और आय का साधन बनाकर इसके महत्त्व को घटा देते हैं। विधि-विधान से साधना न होने के कारण द्रव्य देकर प्राप्त किए गए यन्त्र उतना कार्य भी नहीं करते हैं। ऐसी ही दृष्टियों को सामने रखकर हमने 'यन्त्रशक्ति' की रचना की है। विस्तार के कारण कुछ अन्य दुर्लभ यन्त्रों को हमने इसके दूसरे भाग में दिया है।

हम विश्वास करते हैं कि इसमें दिए गये यन्त्र प्रयोगों से साधक जन लाभ उठायेंगे तथा इस लेखन में कोई त्रुटि रह गई हो तो उसका हमें कृपापूर्वक सूचन करते हुए क्षमा करेंगे।

—डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

एक दृष्टि ं

यन्त्र एक वैज्ञानिक देन है, जिसे प्राचीन महर्षियों
कठोर साधना के पश्चात् इष्टदेव की कृपा से प्राप्त किया है
स्वयं में सोयी हुई शक्तियों को जगाने के लि
यन्त्रों की आराधना आवश्यक है
वैदिक वाङ्मय में यन्त्रों के माध्यम से आराधना क
सूक्ष्म निर्देश है। उसी को तान्त्रिक आचार्य
ने उपकार की भावना से प्रकाशित किया है
यन्त्रों की रचना का शुभारम्भ 'बिन्दु' से ही हुआ है
हमारी वर्णमाला के सभी अक्षर यन्त्ररूप हैं
सभी धर्म और सम्प्रदाय यन्त्र की शक्ति को मानते
तथा उनके प्रयोग से सुख-समृद्धि प्राप्त करते हैं
आधुनिक विज्ञान और यन्त्र,
यन्त्रलेखन विधि, बीजमंत्र और अंक,
अंकयंत्रों के चार प्रकार, अंकात्मक नौ शक्तियां,
गणेश यन्त्र, भैरव यन्त्र, सूर्ययन्त्र, मंगल यन्त्र,
शनि यन्त्र, कार्तवीर्यार्जुन यन्त्र और उपासना
एवं अन्य दुर्लभ, महत्त्वपूर्ण यन्त्र

विषयानुक्रमणिका

परिचय विभाग

प्रयोग-विभाग

महत्त्वपूर्ण दुर्लभ यंत्रों के लिए इसका दूसरा भाग पढ़ें।

तंत्र शक्ति

—डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

तन्त्र सत्य है, स्थायी है और सर्वथा कल्याणप्रद है। तन्त्र की इस अनोखी शक्ति से आप भी आंखें चार कर सकते हैं। चूकिये मत, पढ़िए और स्वयं परखिए कि हम कितना सच बोल रहे हैं।

तन्त्र दूर की कौड़ी है, ऐसा कहने वालों को आप निरुत्तर कर सकते हैं। वनस्पतियों से किए जाने वाले तन्त्रों के साथ आप इसमें पाएंगे कि—

(i) तन्त्र से विष निवारण सम्भव है।

(ii) तन्त्र से सबका कल्याण होता है।

(iii) नारियल के तन्त्र, रत्नों का तन्त्र, दक्षिणावर्त्त शंख के तन्त्र और वनस्पतियों—जैसे गुंजा, बरगद आदि के तन्त्र का प्रामाणिक विवेचन, साधना का प्रकार एवं सिद्धि का सोपान।

(iv) जी हां, हाजरात (नखदर्पण) नाखून में ही वास्तविकता को देखना हिन्दू तन्त्रों में भी है। साथ ही इस्लामी तन्त्र की यह बहुचर्चित पद्धति भी दी गई है।

(v) जमीन में गड़ा धन जानिए और स्वयं तन्त्र को विज्ञान के मुकाबले पर परखिए।

(vi) तन्त्र का विकास, तन्त्र का वास्तविक स्वरूप, इसके साहित्य का परिचय एवं तन्त्र साधना के प्रकार एक विद्वान् की कलम से।

(vii) तिलक तन्त्र, फल-फूल तन्त्र, काजल तन्त्र एवं तन्त्र से ग्रहों की शान्ति के अद्‌भुत और सटीक उपाय।

तन्त्र शक्ति का संक्षेप में सम्पूर्ण परिचय। चतुर्थ संशोधित संस्करण इसकी लोकप्रियता का प्रमाण है।

मूल्य : 25 रुपये

रुद्रयामल तन्त्र

—डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

रुद्रयामल-तन्त्र तन्त्रसाहित्य के विशाल सागर में अद्‌भुत रत्न के समान अपनी महानता और तान्त्रिक प्रयोगों के लिए सर्वत्र विख्यात है। तन्त्र का कोई भी ग्रन्थ ऐसा नहीं मिलेगा जिसमें रुद्रयामल का प्रमाण के रूप में उद्धरण नहीं लिया गया हो। भगवान शिव और भगवती पार्वती के संलाप के रूप में उनके ही साधना-मार्ग को प्रशस्त करने वाला यह ग्रन्थ अत्यन्त प्रामाणिक और सर्वोपरि माना गया है।

वर्षों के परिश्रम के बाद लेखक ने इसका यह सार-संस्करण तैयार किया है। इसमें सर्व साधारण पाठकों की रुचि और आवश्यकता को ध्यान में रखकर ऐसा उत्तम विवेचन प्रस्तुत किया गया है कि साधना के पथ पर चलने वाले को कोई कठिनाई न हो और कोई विषय छूटे भी नहीं। तान्त्रिक संकेतों को अन्य तन्त्र ग्रन्थों से विस्तारपूर्वक समझाकर तथा पूर्ण प्रामाणिक विधि देकर उनके लिए राजमार्ग खोल दिया है।

१. श्री गुरु उपासना, गुरुयन्त्र, पूजा-विधान।

२. श्री महागणपति साधना-महामन्त्र, महायन्त्र नामोपासना, महागणपति-तर्पण विधान।

३. भैरव-साधना, नामावली प्रयोग, मन्त्र प्रयोग, स्वर्णाकर्षण पक्षिराज (आकाश भैरवी के प्रयोग)।

४. भगवान शिव की तान्त्रिक उपासना, पार्थिव पूजा, महामृत्युंजय, 27 प्रकार के मन्त्र प्रयोग, तान्त्रिक शिवसंजीवनी प्रयोग, अन्य देवताओं के मृत्युंजय प्रयोग।

५. दश महाविद्याओं की रुद्रयामलोक्त साधना और प्रयोग।

६. शान्ति दुर्गा आदि नौ दुर्गाओं के प्रयोग।

७. गायत्री साधना, सिद्धगायत्री, मुक्ति चिन्तामणि कवच, त्रिपदा गायत्री स्तवराज, सर्वार्थ साधनकर गायत्री यन्त्र आदि।

८. रुद्रयामलोक्त नवग्रह साधना, मन्त्र, यन्त्र, स्तोत्र आदि।

९. अद्‌भुत स्तोत्र, प्रयोग, रस-कल्प और धारणा प्रयोग आदि।

परिचय-विभाग

मंगलाचरणम्

ओङ्कार-मणि-घण्टेन्द्र-रणन्निगम-बृंहितम् ।
चित्ते शृंखलितं भक्त्या चिन्तये चिन्मयं गजम् ॥
वेधो वदनराजीव वनहंसी सरस्वती ।
सत्पक्षपाता सततं मानसे रमतां मम ॥
रेखा-बिन्दु-विसारिणो नव-नवोन्मेषेषु सञ्चारिणी,
वर्णव्रात-विहारिणी स्फुरदनेकाङ्कौघ-विस्फारिणी ।
नानानिर्मलिनाकृतिव्रततिभिर्भक्तादि-सम्पालिनी,
काचिद् यन्त्रमयी चकास्तु हृदये माता महःशालिनी ॥
येषां पादरजांसि पान्ति परितः पापीयसः पामरान्
प्रत्यक्षं जगतीतले वितनुते ज्ञानं यदीया कृपा ।
ये वै स्वं शरणं श्रितान् प्रतिपदं सम्बोधयन्ते सृतिं,
यान् श्रित्वा मनुजो भवेद् गतभयस्तेभ्यो गुरुभ्यो नमः ॥
हृद्येयं यन्त्रविद्या विविधगुणगणैर्गौरवं भूरि लब्ध्वा,
लोके लोकस्य शोकान् हरति वितरति स्वस्ति सत्यं सुनोति ।
पूर्वाचार्यैः प्रशस्ताऽप्यतिगहनतया गोपिता शास्त्र-कुञ्जे,
तामत्र प्राणिमात्रं कुशलयितुमनाः किञ्चिदुद्घाटयामः ॥
क्षम्योऽयं तनुजः कथञ्चिदपि यो मातः कृपा-पञ्जरे,
निःशङ्कं परितः स्थितस्तव पदम्भोजस्मृतौ तन्मयः ।
लोकानामपकारिभावममलं धृत्या हृदि श्रीगुरो—
राज्ञां यन्त्र-विचारसारसहितां शक्तिं मृदाऽरीरचत् ॥
विज्ञाः ! क्षमन्तामिह यन्मयागस्तन्त्रोक्तमार्गेऽज्ञतया कृतं चेत् ।
संशोध्य सर्वं जगतो हिताय सत्साधनानन्दफलं लभन्ताम् ॥

—रुद्रस्य

॥ ॐ यन्त्रशक्तिस्वरूपिण्यै नमः ॥

१
यन्त्र-साधना सर्वसिद्धि का उत्तम द्वार

प्राणियों में सब से महत्त्वपूर्ण प्राणी मनुष्य है। मनुष्य का जन्म अनेक सुकृतों के फलस्वरूप होता है। इस जन्म में आकर भी अनेक व्यक्ति व्यर्थ के कार्यकलापों में अपना अमूल्य समय व्यतीत कर देते हैं। ईश्वर कृपा से जो वंचित रहते हैं वे कभी सोचते भी नहीं कि हमारा जन्म किस लिए हुआ है? हमारा कर्त्तव्य क्या है? किस महान् लक्ष्य की पूर्ति के लिए हमें अग्रसर होना है? बस, केवल आहार-निद्राभयमैथुनं च इत्यादि सामान्य बातों में—जो कि पुरुष और पशु में समान रूप से व्याप्त रहती हैं, उनकी प्रवृत्ति रहती है।

बहुत थोड़े लोग ऐसे होते हैं जिन्हें भगवत्कृपा, सद्गुरु कृपा एवं पूर्व पुण्यों अथवा पूर्व संस्कारों के प्रभाव से अच्छे कर्मों के प्रति आग्रह होता है। सदाचार के प्रति झुकाव होता है। सन्मार्ग पर चलने की भावना जागती है, सत्संगति से कुछ जान लेने की, पा लेने की अभिरुचि होती है। उनमें भी कुछ लोग जानकर भी; पाकर भी कुछ कर नहीं पाते। केवल बुद्धि-विलास तक ही उनकी परिचर्याएं होती हैं। परिचर्या के अन्तर में प्रवेश बहुत कम व्यक्ति कर पाते हैं।

अब जो लोग कुछ साधना की इच्छा रखते हैं तो उनकी सबसे पहली अपेक्षा होती है—'सीधे सरल और निश्चित निर्देश की' और यह कार्य सद्गुरु के अधीन होता है। गुरु भी सरलता से नहीं मिल जाते। उनकी प्राप्ति में भी हमारा पुण्योदय ही सहायक होता है। आज कई विद्वानों द्वारा लिखित ग्रन्थ भी गुरु की कुछ अंशों में पूर्ति करते हैं। उनसे कुछ निर्देश मिल जाते हैं तो यह प्रश्न सामने आता है कि क्या करें?

क्योंकि मानव-जीवन जितना विशाल है उससे कहीं अधिक उसकी आकांक्षाएं हैं। पद-पद पर कोई न कोई कठिनाई अपना बेसुरा राग अलापती खड़ी ही रहती है। प्राय: यह स्थिति बनती ही रहती है कि जो सोचते हैं वह दूर चला जाता है और जो कभी सोचा ही नहीं है, वह पास चला जाता है। ऐसी ही स्थिति का उल्लेख करते हुए भगवान् राम ने कहा था—

यच्चिन्तितं तदिह दूरतरं प्रयाति,
यच्चेतसाऽपि न कृतं तदिहाभ्युपैति।
प्रातर्भवामि वसुधाधिप-चक्रवर्ती,
सोऽहं व्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी।।

"जो सोचा था वह दूर—बहुत दूर चला गया। जो मन में भी नहीं आया था वह पास आ रहा है। सोचा था कि मैं प्रात: होते ही एक बहुत बड़ा पृथ्वीपति-क्रवर्ती बन जाऊंगा, वही मैं जटा धारण कर तपस्वी के रूप में वन में जा हा हूं।"

यह स्थिति मानव-जीवन में बहुधा आती ही रहती है। अत: कहा जाता है कि मानव की 'अपेक्षा और आकांक्षा' अनन्त-व्यापिनी हैं। मानव की लोभवृत्ति के कारण जितनी आवश्यकता या अपेक्षा होती है, वह वहीं तक इच्छाओं-आकांक्षाओं को सीमित नहीं रख पाता है। वह तो भविष्य की ओर झांकता हुआ भूत की नींव पर वर्तमान के महल खड़े करता है। इसका फल भी उसे महत्त्वाकांक्षी बनाता रहता है। महत्त्वाकांक्षा कोई दुर्गुण नहीं है और न कोई असम्भव को सम्भव बनाने की वस्तु है। केवल इसकी पूर्ति के लिए किए जाने वाले प्रयासों का पन्थ सत् होना चाहिए। आज के युग में सन्मार्ग पर चलकर आकांक्षाओं की पूर्ति का प्रयास करना किसी को रुचिकर नहीं प्रतीत होता अथवा यों कहिए कि सन्मार्ग पर चलने से आकांक्षाओं की पूर्ति होगी' इस पर कोई विश्वास ही नहीं करता है। यही कारण है कि लोग कुमाग पर प्रवृत्त हो जाते हैं और अपने पूर्व संस्कारों के कारण कुछ सफलता पा लेने पर उसी मार्ग को अपना वास्तविक मार्ग मान बैठते हैं जो कथमपि ठीक नहीं है।

ऐसे असत् मार्ग से बचाकर सन्मार्ग पर ले जाने का कार्य शास्त्रों का है, साधु-सन्तों का है, महापुरुषों का है तथा सद्गुरु और सदाचारी पुरुषों का है। ऐसे महापुरुष अपेक्षा और आकांक्षा की पूर्ति के लिए अनेक उपायों का निर्देश करते हैं जिनमें मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र भी महत्त्वपूर्ण हैं। जीवन की यान्त्रिकता में, स्वल्प समय में ही बहुत पा लेने के लिए 'यन्त्र' बहुत उपयोगी हैं। यन्त्र द्वारा संचित ऊर्जा का प्रयोग यथासमय किया जा सकता है। अत: यन्त्रों का संग्रह, उनके प्रयोग-विधान तथा तत्साधन-सम्बन्धी एक निश्चित पद्धति के रूप में यह यन्त्रशक्ति अवश्य ही पाठकों की अपेक्षा और आकांक्षाओं की पूर्ति में पूर्णरूपेण सहायक होगी; ऐसा विश्वास है। 'यन्त्रशक्ति' से पूर्व हमने मन्त्रशक्ति और तन्त्रशक्ति नामक दो पुस्तकों की रचना करके प्रकाशित की हैं। उनका सर्वत्र समादर ही प्रस्तुत ग्रन्थ की प्रेरणा का स्रोत है। इसमें हमने अपनी लेखन-पद्धति को भी पहले की तरह ही स्वीकृत करते हुए उसमें यथावश्यक परिष्कार लाने का प्रयत्न किया है।

यन्त्र-साहित्य अति विशाल है। इसमें अनेक गहन तत्त्वों का भी समावेश है। "जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ" इस उक्ति के अनुसार हमारे पूर्व-महर्षियों ने अत्यन्त परिश्रम और तप करके इस विद्या के रहस्य को प्राप्त किया; किन्तु परोपकाराय सतां विभूतय: के अनुसार प्राणिमात्र के कल्याण की कामना करते हुए उन्होंने शास्त्रों में ऐसे रहस्यों का भी उद्घाटन कर दिया है। उसी में से कुछ प्रसादी गुरुकृपा से प्राप्त होने पर उसे हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं।

हमारी मान्यता है कि 'ये यन्त्र आज के व्यस्त जीवन में अनेक समस्याओं से घिरे हुए मानव के लिए एक उत्तम सहायक बनकर उसकी कठिनाइयों को दूर करेंगे तथा उसकी 'अपेक्षा और आकांक्षा की पूर्ति में सफल सिद्ध होंगे।' हमने अन्यत्र लिखा भी है कि—

नानाऽपेक्षा नराणां प्रतिपदमुदिताः सम्भवन्त्यत्र लोके,
किंचाकांक्षा अनेका अपि च विदधति प्रत्यहं स्वं प्रसारम्।
तासामत्रार्थसिद्ध्यै परमसुकरुणावद्भिरार्यैर्मुनीन्द्रै-
र्नैके मार्गाः प्रदिष्टा इह तदनुगतो यन्त्रमार्गो विधेयः॥

अर्थात् इस लोक में मनुष्यों की अनेक प्रकार की आकांक्षाएं उत्पन्न होती हैं और अनेक अपेक्षाएं भी प्रतिदिन अपना प्रसार करती रहती हैं। उन सबकी सिद्धि के लिए यहां परम कृपालु आर्य ऋषि महर्षियों ने अनेक मार्ग दिखलाए हैं, उनमें से यन्त्रमार्ग भी एक है जिसका आश्रय लेना चाहिए।

'यन्त्र-साधना' एक सरल, सुगम और उत्तम मार्ग है तथा इसकी विधिवत् साधना करने से सभी प्रकार की सिद्धि के द्वार खुल जाते हैं। इसलिए कहा गया है कि—

सर्वासामेव सिद्धीनां यन्त्रसाधनमुत्तमम्।
द्वारं शास्त्रेषु सम्प्रोक्तं तस्मात् तत् परिशील्यताम्॥

२

यन्त्र : शब्दार्थ और परिभाषा

'यन्त्र' शब्द 'यम्' धातु से बना है। इस धातु के अर्थ क्रमशः विपरीत, परिवेषण और वेष्टन आदि होते हैं। यच्छति अत्रेति यन्त्रम् अथवा यमयति अत्रेति यन्त्रम्। इस व्युत्पत्ति के अनुसार यम् धातु से उणादिसूत्र—गृधृपचिवचियमिसदिक्षदिभ्यस्त्रः द्वारा त्र प्रत्यय होने से 'यन्त्र' शब्द सिद्ध होता है।

आगमानुसार इसकी व्युत्पत्ति यच्छति त्रायते चेति यन्त्रम् होगी। इसके अनुसार यमन और त्राणरूप दो धातुओं से यह शब्द बनेगा। भावार्थ होगा—"जो व्यक्ति अपनी चेष्टाओं को नियमित करके आकार विशेष में अपने इष्ट की अर्चना-भावना करता है उसका त्राण-रक्षा करने वाला"। मन्त्र और तन्त्र के अर्थ भी इसी प्रकार आगमों में बताये गये हैं। इसी आधार पर यन्त्र में 'शक्तियों का नियन्त्रण' माना गया है कि यन्त्र शक्तियों का भण्डार होता है, इससे साधक अपनी साधना के बल पर यथेष्ट ऊर्जा प्राप्त कर सकता है। आदि।

देवीभागवत में अर्चा-प्रतिमा के अभाव में यन्त्र को ही इष्टदेव का स्वरूप बतलाते हुए कहा गया है कि अर्च्चाभावे तथा यन्त्रम्। (३।२६।२१)

नारदीय-पुराण में इसी बात की पुष्टि करते हुए प्रसंगवश कहा गया है कि—

आपोऽग्निर्हृदयं चक्रं विष्णोः क्षेत्र-समुद्भवम्।
यन्त्रञ्च प्रतिमास्थानमर्चने सर्वदा हरेः॥

अर्थात् जल, अग्नि, हृदय, चक्र, विष्णु के क्षेत्र में उत्पन्न वस्तु और यन्त्र ये सब भगवान् विष्णु की प्रतिमा के समान पूजन के स्थान हैं।

गौतमीय-तन्त्र में भी यही बात कही गई है—

शालाग्रामे मणौ यन्त्रे प्रतिमामण्डलेषु च।
नित्यं पूजा हरेः कार्या न तु केवलभूतले॥

अर्थात्—शालग्राम-शिला, मणि, यन्त्र, प्रतिमा और मण्डल पर भगवा विष्णु की सदा पूजा करनी चाहिए। केवल भूतल पर पूजन करना उचित नहीं है

योगिनीतन्त्र में भगवती पूजा के लिए जो स्थान बताए गये हैं उनमें भी यन्त्र का निर्देश है यथा—

लिंगस्थां पूजयेद् देवीं पुस्तकस्थां तथैव च।
मण्डलस्थां महामायां यन्त्रस्थां प्रतिमासु च॥
जलस्थां वा शिलास्थां वा पूजयेत् परमेश्वरीम्। इत्यादि।

तथा कौलावली तन्त्र में भी यन्त्र का महत्त्व माना गया है। यथा—

करवीरे शुक्लरक्ते द्रोणं वा यत्र तिष्ठति।
तत्र देवी वसेन्नित्यं तद्यन्त्रे चण्डिकार्चनम्॥

यन्त्र और देवता में ऐक्य मानने के लिए भी शास्त्रों में कहा गया है कि—

तन्त्रं मन्त्रमयं प्रोक्तं मन्त्रात्मा देवतैव हि।
देहात्मनोर्यथा भेदो यन्त्र-देवतयोस्तथा॥

यन्त्र मन्त्ररूप हैं, मन्त्र देवताओं का ही विग्रह है। जैसे शरीर और आत्म में भेद नहीं होता है, वैसे ही यन्त्र और देवता में भी कोई भेद नहीं होता है।

अन्यत्र यह भी निर्देश है कि यन्त्र की पूजा किए बिना देवता प्रसन्न नहीं होते हैं। यथा—

आदौ लिखेद् यन्त्रराजं देवतायाश्च विग्रहम्।
काम-क्रोधादि-दोषोत्थ-सर्वदुःख-नियन्त्रणात्॥
यन्त्रमित्याहुरेतस्मिन् देवः प्रीणाति पूजितः।
विना यन्त्रेण पूजायां देवता न प्रसीदति॥
दुःखनियन्त्रणाद् यन्त्रमित्याहुर्यन्त्रवेदिनः।

साधना के आरम्भ में देवता के विग्रह-शरीररूप यन्त्र का लेखन करें। काम, क्रोध आदि दोषों से उत्पन्न सब प्रकार के दुःखों का नियन्त्रण करने से ही इसे 'यन्त्र' कहते हैं। इसकी पूजा करने से देवता प्रसन्न होते हैं। यन्त्र की

पूजा किए बिना देवता प्रसन्न नहीं होते हैं। आगम शास्त्रज्ञों ने दुःखों का निवारण करने से ही इसे 'यन्त्र' कहा है।

इस प्रकार यन्त्र की महिमा, उसकी पूजा के फल आदि का आगम, तन्त्र, पुराण एवं अन्यान्य ग्रन्थों में विस्तार-पूर्वक उल्लेख हुआ है। वैसे यमनात् त्रायत इति यन्त्रम् यह निरुक्ति भी विशेषार्थक होने से प्रसिद्ध ही है।

जिस प्रकार सामान्य जीवों के रहने के लिए उनके घर बने रहते हैं या बनाए जाते हैं उसी प्रकार देवताओं के निवास योग्य गृह भी यन्त्र ही हैं। यन्त्रों का अपर नाम देवनगर भी है (जिसके आधार पर बनी लिपि को, देवनागरी कहा जाता है)। इन देवनगरों में न केवल अकेले देव का ही आवास होता है, अपितु प्रत्येक देव के अधिदेव, प्रत्यधिदेव, परिकर आदि का भी आवास होता है। अतः यन्त्र केवल कुछ रेखाओं का विनोदात्मक जाल मात्र न होकर साक्षात् सपरिवार देवताओं का 'आवासगृह' है, यह मानना चाहिए।

यन्त्र को 'देवनगर' अथवा 'देवताओं का आवास-गृह' कहना ही वस्तुतः यन्त्र की एक उत्तम परिभाषा कही जा सकती है। यह गृह केवल गृहमात्र ही न होकर एक मजबूत दुर्ग है, जिसमें अपने-अपने स्थान, दिशा, मण्डल, कोण आदि के अधिपति पूर्णरूप से सादर आमन्त्रित होकर पूजा प्राप्त करते हैं तथा यन्त्र के प्रधान अधिष्ठाता देव की आज्ञा पाकर अपने-अपने स्थानों की सुरक्षा के लिए नियुक्त होते हैं। इस तरह यन्त्रस्थ पूरा देव-परिवार धारक-साधक की सुरक्षा एवं कार्य सिद्धि में सदा-सदा सहायक होता है।

यही आवास-गृहरूप यन्त्र भारतीय ज्ञान-विज्ञान के लिए प्रतीक के रूप में सर्वत्र व्याप्त होकर इतना घुल-मिल गया है कि इसका अपना मूलरूप अब उन्हीं का एक वास्तविक रूप बन चुका है। इस दृष्टि से लिपितत्त्व और यन्त्र की एकरूपता के बारे में कुछ निर्देश आगे दिया जा रहा है।

३
यन्त्र की उत्पत्ति एवं विकास

भारतीय वेदादि शास्त्रों से यह सिद्ध होता है कि प्राणी के उत्पत्तिकाल के साथ ही जिस वाणी का आविर्भाव होता है वह परा, पश्यन्ती एवं मध्यमा के क्रम से होती हुई सर्वजनश्राव्य ध्वनि के रूप में 'वैखरी' कहलाती है। इस वैखरी का सर्वप्रथम वर्ण 'ॐ' है। यह ओङ्कार समस्त वाणी-वैभव का मूलस्रोत है तथा इसी के आकार-विकार से वर्णलिपियों का विकास हुआ है।

श्वास-प्रश्वास के समय 'अजपा-गायत्री' के रूप में प्रसिद्ध बीजमन्त्र 'सोऽहम्' के स और ह का लोप होने पर 'ओम्' का रह जाना तथा उच्चारण-यन्त्ररूप कण्ठ-तालु-नासिका के माध्यम से ध्वनि का प्रकट होना ही ॐ के रेखामय रूप को व्यक्त करता है। ओङ्कार के विभिन्न खण्डों से आचार्यों ने लिपि-देवनागरी का स्वरूप स्थिर किया तथा १ से ९ तक के अंकों की आकृति निश्चित की।

'बिन्दु' भारतीय वाङ्मय का सबसे पहला तत्त्व है जिसके आधार पर इच्छा, ज्ञान और क्रियाशक्ति के रूप में त्रिकोणात्मक विकास हुआ है। शून्य पूर्णता का संकेतात्मक रूप है। इसी आनन्द समुद्र में विराजमान परमात्मा जब इच्छा करता है कि—'एकोऽहं बहु स्याम्'—मैं अकेला हूं, अनेक बन जाऊं। बस, उसी समय मकड़ी के जाले की तरह सृष्टि-विस्तार होने लगता है। भगवती पराम्बा पूर्णमयी बिन्दुरूपा है। उस बिन्दु में उपर्युक्त भावना का उल्लास होने पर प्रथम लघुबिन्दु उछल कर इच्छाशक्ति के रूप में बाहर आती है, दूसरी ज्ञानरूपा शक्ति के रूप में बाहर आती है तथा तीसरी क्रियाशक्ति के

रूप में। इन तीनों बिन्दुओं के परस्पर मिल जाने से 'त्रिकोण' बनता है और इस प्रकार त्रिकोणगत रेखाओं के खण्डों से न्यूनाधिक रेखाएं बनती हैं। रेखाओं और बिन्दुओं के दिशा और विदिशा में फैलने वाले रूपों से तिरछी, गोल, लम्बी, चौड़ी, मिश्र तथा विभिन्न प्रकार की आकृतियां बन जाती हैं। ऐसी आकृतियों का एक निश्चित स्वरूप ही 'यन्त्र' कहलाता है।

विश्व की समस्त वस्तुओं में किसी न किसी प्रकार की एक निश्चित आकृति अवश्य है। ऐसी आकृतियों में से कतिपय आकृतियों का तत्त्ववेत्ता महर्षियों ने अपने दीर्घकालीन स्वाध्याय, मनन और निदिध्यासन के आधार पर परीक्षण किया। उसके फलस्वरूप यह निर्णय लिया गया कि कौन सी आकृति किस देव से सम्बद्ध होकर कौन-कौन सा कार्य सिद्ध करने में सहायक होती है?

सृष्टि के उपादान-कारणभूत पांच तत्त्व—१-पृथ्वी, २-जल, ३-अग्नि, ४-वायु और ५-आकाश का उपर्युक्त आकृतियों में समन्वय होने से इन तत्त्वों के गुण-धर्म भी कार्य-सिद्धि में सहायक होते हैं। यह बात खोजकर इन तत्त्वों के मण्डलों का उसमें मिश्रण किया। मण्डलों के आकार, मूल आकारों के साथ मिलाकर ही मौन नहीं रहे, अपितु उन आकृतियों को और भी गतिशील बनाने की दृष्टि से इनमें कहीं अंक, कहीं वर्ण, कहीं बीजाक्षर तो कहीं मन्त्राक्षर स्थापित करने के विधान प्रस्तुत किये गये।

कुछ यन्त्र वस्तु अथवा प्राणियों की आकृति के साथ मिश्रित रूप में प्रस्तुत हुए तो कुछ ऐसे भी आकार निर्धारित किए गये जिनमें देवता आदि की आकृतियों को भी स्थान मिला।

लिपितत्त्व और यन्त्र

मनुष्य के पास उसके अपने भावों को यथावत् प्रकट करने के लिए तीन साधन माने गये हैं। वह संकेत द्वारा, उच्चारण से तथा लिखकर अपने भावों को व्यक्त करता है। संकेतों में भिन्न-भिन्न अंग ही वर्णमाला का कार्य करते

हैं। ध्यान के समय ये संकेत आन्तरिक रूप को धारण करते हैं और अपनी भावना को आराध्य के प्रति अर्पित करते हैं। बोलने में पहले अव्यक्त ध्वनि और बाद में व्यक्त उच्चारण का प्रभाव पड़ता है। लेखन में बिन्दु और उससे ही विभिन्न खण्ड रेखाओं के साथ मिलकर लिपि के रूप में व्यक्त होते हैं। विद्वानों ने लिपि की चार अवस्थाएं मानी हैं और उनको विकास इस प्रकार दिखलाया है—

१. विचार लिपि —आइडियो ग्रैफिक
२. चित्रलिपि —पिक्टोग्रैफिक
३. अक्षरलिपि —सिलेबिक
४. प्रतीकात्मक लिपि —अल्फाबेटिक

तथा इन चारों अवस्थाओं का विकास क्रमशः चिह्न, वस्तुचित्र, संस्वरलयात्मक वर्ण तथा स्वतन्त्र ध्वनि प्रतीकात्मक रूप में हुआ है। इनमें भी देवनागरी लिपि तो ध्वन्यात्मक—फोनेटिक होने के कारण पाँचवीं अवस्थामयी मानी जाती है।

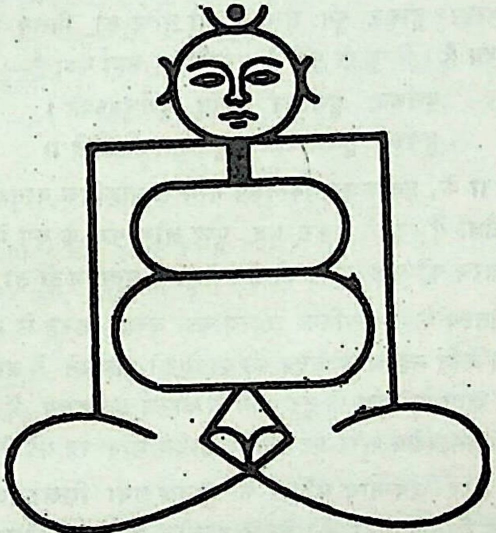
उदाहरण के लिए हम 'ह्रीं' बीज की लिपि का विचार करें। 'वर्णनिघण्टु' में प्रत्येक वर्ण को देवरूप माना है और उसके साथ मात्रा आदि का समन्वय होने से वह एक मन्त्ररूप ही बन जाता है। यथा—

समात्रकः सरेफश्च वर्णस्तत्सानुनासिकः।
सानुस्वार-विसर्गो हि पूर्णं देवत्वमृच्छति॥

(मात्रा, रेफ, अनुनासिक, अनुस्वार और विसर्ग के साथ लिखा गया वर्ण देवता का स्वरूप बन जाता है।)

इसी प्रसंग में ह्रांकार के लेखन का वर्णन करते हुए बताया है कि—'ह्' अक्षर शिव का पर्याय है, 'र्' इच्छा शिव की शक्ति का वाचक है अर्थात् मूलाधार का सूचक है। इन दोनों के मिश्रण से 'ह्र' बनता है ह्रस्व 'इ' तथा दीर्घ 'ई' की मात्राएं इसकी दोनों भुजाएं हैं, ये ही शिव की सृष्टि-शक्ति में

कारणभूत हैं। तथा 'ए' और 'ऐ' की मात्राएं क्रमशः नासिका और नेत्र (प्राणायाम तथा ज्योतिरूप) हैं। 'ओ' और 'औ' की मात्राएं दोनों कर्ण हैं। अनुनासिक का चन्द्र द्वितीया का चन्द्र तथा बिन्दु गंगा से युक्त जटा है। विसर्ग मुख है ता ॐ ध्वनि नादब्रह्म की प्रतीक है। दोनों 'उ' 'ऊ' की मात्राएं ॐ पद्मासन में बंधे हुए चरण आसनशक्ति हैं। इसके अनुसार ह्रींकार का प्राचीन आलेख नीचे लिखे अनुसार होता है—



यह ह्रींकार का प्रतीकात्मक रूप प्रारम्भ में यन्त्र रूप में ही पूजित होता था, बाद में पुरुषाकृति में व्यक्त किया गया है।

इसी प्रकार देवनागरी का प्रत्येक वर्ण, मिश्रवर्णरूप, बीजाक्षर, कूटाक्षर आदि यन्त्र के रूप में ही प्रकृति के चरित्र का रहस्योद्घाटन करते हैं तथा विविध आकार वाले यन्त्र गूढ़ संकेत से पूर्ण होते हैं।

इनकी रेखाओं का विविध प्रकार से किया गया आवर्तन इसकी शक्ति को

प्रकट करता है। यह शक्ति हमें मात्र रेखाओं के मिश्रण से बनी आकृति के कारण ज्ञात नहीं हो पाती है; किन्तु यदि इस पर कुछ विशेष चिन्तन किया जाए तो स्वयमेव रहस्य-ग्रन्थियां खुलने लगती हैं और उनके द्वारा एक साहजिक आनन्द का समुद्र हिलोरें लेने लगता है।

बिन्दु का महत्त्व

भारतीय दर्शन में शून्य को बड़ा महत्व मिला है। शून्य-बिन्दु से सृष्टि और सृष्टि-विस्तार होकर पुनः शून्य में ही सृष्टि का विलय दर्शनशास्त्र का सबसे बड़ा तत्त्व है। बिन्दु ही पूर्ण है। इसीलिए कहा गया है—

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

इसी पूर्णता के प्रतीकभूत बिन्दुरूप यन्त्र से प्राकृतिक वस्तुओं की रचना हुई है। पेड़-पौधों में फूटते अंकुर, पत्र, पुष्प और फल के रूप में प्रकट होकर पूर्णता के ही तत्त्व को परिपुष्ट करते हैं। ये सभी यन्त्ररूप ही तो हैं।

इस लिपितत्त्व के वास्तविक रहस्य को अच्छी तरह से न समझने के कारण हम इस अति महत्त्वपूर्ण तत्त्व की बातों को समझने में असमर्थ रहे हैं। हमारी प्राचीन ज्ञान-शृंखला के टूट जाने के कारण प्रतीकरूप में प्रस्तुत किये गये तत्त्व अब ध्वंसावशेष और प्रदर्शनी के साधन मात्र रह गये हैं।

खजूराहो और जगन्नाथ मन्दिर के गुम्बज़ तथा शिखर आदि में बनी रति-क्रीड़ा-दर्शक शिल्पकृतियों को केवल अश्लील समझकर उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया है जबकि वे वस्तुतः मन्त्रशास्त्र के अन्तर्गत बीजमन्त्रों और कूटाक्षरों के संकेत हैं। इनका चिन्तन नेपाल में तान्त्रिक शिरोमणि राणा धन शमशेर और कुछ अन्य विद्वानों ने किया है।

बीजमन्त्रों से अन्य बीजमन्त्रों की सृष्टि

इसी प्रकार एक बीजमन्त्र से लिपितत्त्व की सूक्ष्मपद्धति से ही बीजमन्त्रों के बदल जाने की क्रिया भी ज्ञातव्य है। 'सोऽहम्' के निरन्तर जप से 'ओम्' की

उत्पत्ति, ह्रीं बीज के ऊपरी हिस्से के लोप से 'ऐं' बीज की उत्पत्ति आदि भी इसी लिपितत्त्व के रहस्यात्मक तत्त्व के आभारी हैं। इस प्रकार यन्त्रशास्त्र एवं यन्त्ररचना भी लिपितत्त्व पर ही अपनी महिमा को प्रतिष्ठित करते हैं।

"भारतीय लिपियों का तान्त्रिक आधार" शीर्षक लेख में डा० भानुशंकर मेहता ने लिखा है कि—

"तन्त्रशास्त्र के अनुसार प्रत्येक वर्ण एक अक्षर मात्र ही नहीं है, बल्कि एक देवतामूर्ति है जिसका अपना रूप है, अपना वेप है, अपना शृंगार है। एक बार इस तत्त्व को समझ लेने पर भिन्न-भिन्न लिपियों में रूपभेद की बात समझी जा सकती है। एक ही व्यक्ति की मूर्ति भिन्न-भिन्न कलाकार भिन्न-भिन्न रूप से बताते हैं क्योंकि उनमें दृष्टिभेद होता है। कोई आगे से देखता है, कोई पीछे से, कोई दाएं से तो कोई बाएं से। इसी प्रकार देवता के भी शृंगार भिन्न-भिन्न हो सकते हैं और आसन भेद भी हो सकते हैं।"

जिन लिपियों का यन्त्रलेखन में उपयोग होता आया है उनको तन्त्रोक्त-हुए बिना और कोई गति नहीं है। क्योंकि यन्त्र-लेखन में जो बीजाक्षर आदि लिखने के लिए कहा गया है वे कैसे लिखे जाएं? इस प्रश्न के समाधानार्थ ही 'वर्णोद्धार-तन्त्र' में लिपि रेखा-विन्यास परिभाषित हैं। तन्त्रोक्त लिपिरेखाओं के तत्तद् लिपि में गर्भित रहने के कारण ही ये सब लिपियां यन्त्र-लेखन में विनियुक्त एवं सफल होती आई हैं। महातान्त्रिक आचार्य भास्करराय ने अपने निबन्धों में प्राणिमात्र के सूक्ष्म शरीर के मूल में षट्चक्रों का रहना, सृष्टि के मूल में श्रीचक्र आदि का प्राकृतिक रूप से रहना तथा चक्रों में बीजाक्षर आदि लिपियों का आकाश में चमकती हुई बिजली की रेखाओं के समान अपंचीकृत तेजोरूपी रेखाओं से अंकित रहना प्रमाणित किया है। इस प्रकार दैवी-विग्रहरूप हमारी वर्णमाला से ही भगवती भारती का भव्य देवी-स्वरूप बना हुआ है जिसका ध्यान हम मातृका-न्यास में सदा करते हैं।

४

यन्त्र और जनसाधारण का भ्रम

भारत और भारत के बाहर के विदेशी लोग भी यन्त्र विद्या से परिचित हैं। जिसका थोड़ा-सा भी परिचय साधना-वृत्ति, साधक समुदाय, साधना-साहित्य अथवा आस्तिक व्यक्तियों से रहा है अथवा जिन्होंने ऐसे लोगों का संसर्ग भी प्राप्त किया है वे यन्त्र के बारे में थोड़ा बहुत अवश्य जानते हैं। बहुत-कुछ लोग अपनी-अपनी जानकारी के अनुसार यन्त्रों का आदर भी करते हैं और कुछ आवश्यकता पड़ने पर उसके ज्ञाताओं से यन्त्र प्राप्त करके उसका फल भी प्राप्त करते हैं।

हमारे देश का समाज शैक्षणिक दृष्टि से दो वर्गों में बटा हुआ है। इसमें एक है शिक्षितों का और दूसरा है अशिक्षितों का। इन दोनों वर्गों के भी दो-दो भेद और किये जा सकते हैं। जिनमें संस्कृतिनिष्ठ शिक्षित और संस्कृति-शून्य शिक्षित, ये प्रथम वर्ग के भेद हैं जबकि अशिक्षित वर्ग के श्रद्धालु तथा अज्ञात ऐसे दो भेद होते हैं। जो संस्कृतिनिष्ठ शिक्षित हैं वे ही हमारी परंपरा, आचार-विचार तथा आस्तिक साधनाओं से परिचित होते हैं। जिन्हें सांस्कृतिक ज्ञान नहीं मिलता, शहरी जीवन में घुले-मिले रहते हैं, न पूर्वजों की धरोहर में सस्कृति का ज्ञान मिलता है और न तात्कालिक वातावरण ही उन्हें भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग करने की प्रेरणा देता है वे इस यन्त्र-मन्त्रमयी साधना को क्या समझें ? अशिक्षित वर्ग में जो श्रद्धालु समुदाय है वह अपनी सूझ-बूझ के समान लोगों से प्रेरणा-प्राप्त होने पर कुछ करता है और जो अज्ञात हैं वे तो दैनिक समस्याओं में ही उलझे रहते हैं।

इस प्रकार बहुत कम लोग ऐसी अच्छी प्रवृत्ति में पहुंच पाते हैं। गीता में भगवान् ने यह स्पष्ट ही कहा है—

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः॥

इसका आशय यह है कि 'हजारों मनुष्यों में कोई विरला मनुष्य ही सिद्धि के लिए प्रयत्न करता है। तथा जो सिद्ध लोग प्रयत्न करते हैं उनमें भी कोई विरला ही मुझे तत्त्वपूर्वक जानता है।'

ऐसी स्थिति में जैसी कि जनसाधारण में धर्म के प्रति अनास्था, ईश्वर के प्रति अविश्वास, मन्त्र-तन्त्र, स्तुति-पाठ आदि के प्रति उपेक्षा और उसे कुछ लोगों का मिथ्या प्रचार मानकर एक 'भ्रम' की संज्ञा दी जाती है उसी प्रकार यन्त्र एवं उनकी साधना को निरर्थक तथा भ्रमपूर्ण कहा जाता है। इधर कुछ लोग ओझा, पण्डित अथवा सामान्य ज्ञान रखकर यन्त्रादि देकर अपना व्यवसाय चलाने वाले सिद्ध बनकर लोगों को ठगते रहते हैं और उससे द्रव्य प्राप्त कर लेते हैं, जबकि उनका परिणाम शुद्ध साधना के अभाव में कुछ नहीं निकलता। अतः 'खिसियानी विल्ली खम्भा नोचे' वाली कहावत सच होती है और वे इस साधना को व्यर्थ का पाखण्ड समझने लगते हैं।

कुछ बातें और फैली हुई हैं कि 'हिन्दू-सम्प्रदाय के मन्त्र मिश्रित हैं, शाप से ग्रस्त हैं, उनके विधान कठिन हैं, उनकी साधना में कई प्रकार की पूजा, जप, हवन, तर्पण, मार्जन, ब्राह्मण भोजन जैसी क्रियाएं करनी पड़ती हैं और अन्त में परिणाम क्या होगा यह अनिश्चित ही रहता है। जबकि अन्य धर्म के यन्त्र शीघ्र सिद्ध होकर फलदायी होते हैं।' किन्तु बात यह ऐसी नहीं है। जैसी जिनको आवश्यकता होती है उसी के समान तैयारी करनी पड़ती है। महायुद्ध के लिये विशाल सेना और युद्ध सामग्री भी विशाल होनी चाहिये जबकि सामान्य झगड़े को शान्त करने के लिए सामान्य प्रभाव से ही काम चल जाता है। उसी प्रकार कर्मभेद से यन्त्र भी सिद्ध करने में जपादि किये जाते हैं।

अतः भयभीत नहीं होना चाहिये। सत्कार्य में प्रवृत्त होकर अपनी पुरानी धरोहर को सम्हाल कर इससे अपना आत्मबल, ज्ञानबल और सुख-सम्पदा की अभिवृद्धि का निरन्तर प्रयास करना चाहिए। गीता में भगवान् कृष्ण ने स्पष्ट ही कहा है कि—'संशयात्मा विनश्यति' अर्थात् जिसके मन में शंका रहती है, वह विनष्ट हो जाता है। अतः निःशङ्क होकर यन्त्र-साधना में प्रवृत्त होवें, अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होगी।

वस्तुतः यन्त्र क्या है?

प्रायः लोग यह भी प्रश्न किया करते हैं कि 'वस्तुतः यन्त्र क्या है ?' इस प्रश्न का संक्षिप्त किन्तु गहन वास्तविक उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है—

यन्त्र की रचना विन्दु से होती है। विन्दु शब्द की रचना में तीन धातुओं का एकीकरण माना गया है। अर्थात् व्याकरण के 'विद्' धातु का पहला अर्थ सत्ता वाचक है। अतः उससे बनाये गये विन्दु शब्द का अर्थ 'सत्ता' होगा। दूसरा अर्थ है 'ज्ञान'। अतः बिन्दु का दूसरा अर्थ भी ज्ञान होगा। तीसरा अर्थ है 'लाभ'। अतः विन्दु का तीसरा अर्थ होगा 'लाभ'। विद् सत्तायां, विद् ज्ञाने और विद् लाभे' इन तीनों धातुओं से निष्पन्न बिन्दु का अर्थ क्रमशः इच्छा, ज्ञान और क्रिया का सूचक हैं। ये ही तीन विन्दु मिलकर त्रिकोण बनाते हैं। त्रिकोण से बने विभिन्न विस्तारों का विवेचन पहले किया जा चुका है।

अन्य दृष्टि से यन्त्र इच्छास्थानीय होने से प्रथम श्रेणी का प्रतीक है। जैसे परमात्मा की यह इच्छा कि 'एकोऽहं बहु स्याम्' मैं अकेला हूं, बहुरूप बनूं। इसके द्वारा ही ईश्वर सृष्टि का आरम्भ करके उसमें व्याप्त रहते हुए उसका विस्तार करता है, उसी प्रकार यन्त्र भी इसकी इच्छाशक्ति का पहला प्रतीक है। अर्थात् सृष्टि के आरम्भ का स्वरूप है। इसी का दूसरा रूप 'ज्ञान' का प्रतीक है जो मूर्ति-प्रतिमा के रूप में अधिक स्पष्ट होकर अपनी सत्ता का ज्ञान कराता है, अवयवों का ज्ञान होने से इच्छा का विस्तार होता है तथा कर-चरण-मुखादि स्वरूप देकर अपने आप को पहचानने में मानव को सुविधा

होती है। "यह मुझसा ही है, यह सर्वगुण सम्पन्न, सर्वसत्ता सम्पन्न है, मुझमें दुर्बलता है अतः उसे दूर कर मैं भी ऐसा ही बनूं।" ऐसी प्रेरणा से साधना में आगे बढ़ने की शक्ति मिलती है।

इधर 'मन्त्र' दूसरा रूप है जो ज्ञान का प्रतीक है। यन्त्र की सत्ता इच्छा के पश्चात् उसे पहचानने के लिए मन्त्र आवश्यक है। मन्त्र-ज्ञान द्वारा बलाबल का परिचय प्राप्त होता है। तीसरा स्वरूप 'क्रिया' है। इच्छा होने पर उसका ज्ञान प्राप्त करना और उसकी सिद्धि के लिए "क्रिया" करना विधिसंगत है। अतः मूर्ति की पूजा-अर्चना करके इष्टदेव को प्रसन्न किया जाता है। यन्त्र और मन्त्र की सिद्धि भी 'तन्त्र' पर आधारित है। तन्त्र ही क्रिया है।

इस प्रकार यन्त्र सर्वोच्चस्थानीय है तथा मन्त्र और तन्त्र इसके साधक तत्त्व हैं। आगमों के अनुसार तीनों मिलकर साधक की कामनाओं को पूर्ण करते हैं।

अतः इतना ही समझना पर्याप्त है कि "यन्त्र समस्त सिद्धियों का द्वार है, देवताओं का आवास-गृह है, सृष्टि का मूल है, ज्ञान-विज्ञान का केन्द्रस्थल है। उपासना का एकमात्र आधार है, तथा यन्त्र-सिद्धि से ही सर्वविध सिद्धियां सुलभ हैं।"

५

यन्त्रों की आकृतियां तथा अन्य ज्ञातव्य

जिस प्रकार यन्त्र अनेक हैं उसी प्रकार यन्त्रों की आकृतियां भी अनेक हैं। हमने यन्त्रों के प्रकारों के बारे में विवेचन करते हुए आकृतियों के बारे में भी कुछ निर्देश किया है, इस सम्बन्ध में यहां विस्तार से विचार किया जा रहा है।

मुख्यरूप से यंत्रों की आकृतियां 'पूजा' के लिए और 'प्रयोग' के लिए बनाई जाती हैं। पूजा के यंत्रों की आकृति के कुछ स्वरूप शास्त्रों में मिलते हैं, जिनमें १. भूपृष्ठ, २. मेरुपृष्ठ, ३. पाताल, ४. मेरुप्रस्तार और ५. कूर्मपृष्ठ, ऐसे पांच प्रकार देखने में आते हैं। इनका परिचय इस प्रकार है—

१. भूपृष्ठ यन्त्र—इस आकृति के यंत्र किसी भी वस्तु के बनाये जा सकते हैं। इसमें भूपृष्ठ का तात्पर्य है समतल भूमि का भाग। अर्थात् भूपृष्ठयंत्र समतल आकार वाली वस्तु पर यंत्र की आकृति को उत्कीर्ण करके बनाया जाता है। इसके दो प्रकार होते हैं—

(क) रेखा, वर्ण, मंत्र, बीज आदि जो भी यंत्राधार पर अंकित हों, वे उभरे हुए हों। (ख) उपर्युक्त बातें उत्कीर्ण (खुदी हुई) हों।

२. मेरु-पृष्ठ यन्त्र—यह आकृति वस्तु के आकार को मेरु की तरह ऊंची क्रमशः उठी हुई पर्वताकार में बनाई जाती है। अंतिम भाग शिखर होता है जो ऊपर नुकीला बन जाता है। नीचे का हिस्सा चौड़ा होता है जो बीच में क्रम से छोटा होता जाता है। इसमें भी रेखा आदि १. उभरी हुई तथा २. उत्कीर्ण होती हैं।

३. पाताल यन्त्र—यह मेरुपृष्ठ यंत्र के विपरीत ठीक उसी पद्धति से गड्ढे के रूप में खुदा हुआ होता है। यह कटोरी के आकार का बनता है।

४. मेरुप्रस्तार यन्त्र—मेरुपृष्ठ में जैसे रेखा आदि उभरे हुए और खुदें हुए होते हैं वे ही इस यंत्राकृति में कटे हुए होते हैं। देखने में ऐसा प्रतीत होता है कि यंत्रांकन का प्रत्येक भाग काट कर एक के ऊपर एक रखा हुआ हो।

५. कूर्मपृष्ठ-यन्त्र—यह आकृति मेरुयंत्र के शिखर से रहित तथा कुछ ढलाववाली होती है। नीचे का आकार चौकोर तथा ऊपर का आकार कछुए की पीठ के समान होता है।

कुछ अन्य आकृतियों में अंकित यंत्र भी यत्र-तत्र दिखाई देते हैं। यथा—

गले में धारण करने के योग्य जंजीर के पेण्डुलम में त्रिकोण, स्वस्तिक, पान आदि की आकृति में बने हुए। कुछ यंत्र एक निश्चित प्रकार की पीठिका-बैठक बनाकर उस पर भी बनाये जाते हैं।

ऐसे यंत्रों की रचना भिन्न-भिन्न फलों को लक्ष्य में रखकर की जाती है जिसका ज्ञान गुरु परम्परा से प्राप्त करना चाहिए।

यन्त्रों का मूर्ति के रूप में पूजन—हमारे देश में कई स्थान ऐसे हैं, जहां यंत्र को ही मंदिरों में भगवती की प्रतिमा के रूप में वस्त्र आभरणादि पहनाकर दर्शन के लिए प्रस्तुत किया जाता है। गुजरात में श्री बहुचरा माता के मंदिर में गायत्री-यंत्र को और अम्बामाता के मंदिर में बीसा यंत्र को ऐसे ही आभरणों से अलंकृत किया जाता है। ऐसा वहां के जानकारों का कथन है।[१]

यन्त्राकृतिमय देवीप्रासाद-मन्दिर

गुजरात में ही 'खेडब्रह्मा' नामक अम्बामाता का मंदिर तथा डाकोरजी में द्वारका के शंकराचार्य द्वारा निर्मित श्रीयन्त्ररूप मंदिर यन्त्राकृत्रि रूप मंदिरों के

---

१. इसी प्रकार अन्य देवताओं के यंत्रों की आकृतियों की पूजाएं भारत के देव-मंदिरों में की जाती हैं अथवा स्वतंत्ररूप में ऐसे यंत्रों को ही उन स्थानों में प्रधानरूप से ऐसे पूजित कर वहां के अधिष्ठातृ देवों की भी अर्चनाएं की जाती हैं। तिरुपति, नाथद्वारा आदि प्रसिद्ध मंदिर इसके प्रमाण हैं।

उदाहरण हैं। ऐसे ही मंदिर अन्य प्रदेशों में यत्र-तत्र देखे जा सकते हैं।

पांच तत्त्वों की आकृति वाले यन्त्र और उनका फल

रेखायंत्र और अंकयंत्रों में 'पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश' इन पां तत्त्वों का भी समावेश किया जाता है। इनमें पृथ्वी, जल और अग्नि की रेखा तो स्पष्टतः ज्ञात हो जाती हैं। जैसे पृथ्वी का आकार चौकोर—चतुष्कोणात्म है। जल का मण्डल गोल वृत्ताकार माना गया है। अग्नि का आकार त्रिको रूप है।[1] वरुण के मण्डल को त्रिवृत्त और साढ़े तीन आवर्त वाला भी लि हैं, तब वह सार्धत्रिवलयाकारा कुण्डलिनी का स्वरूप हो जाता हैं।

त्रिकोण जब ऊर्ध्वमुख और अधोमुख के रूप में लिखा जाता है तब क्रमशः शिव और भगवती का सूचन करता है।

पंचदशी यंत्र के संबंध में भी हमारे यहां तत्त्वों का वर्णन आया है यद्यपि वहां इन तत्त्वों के आकार नहीं हैं; किन्तु अंकों की योजना ही वहां तत्त्व का सूचन करती है। अतः तत्त्वों की उपासना से मिलने वाले फलों का संक्षि वर्णन यहां दिया का रहा है—

(१) **पृथ्वी तत्त्व**—यह तत्त्व स्थिरता, धैर्य, उत्साह, विचार-प्रधानत भौतिक सुख एवं सफलता को प्रदान करता है।

(२) **जल तत्त्व**—यह तत्त्व चंचलता, स्निग्धता, सम्मान, प्रेम, संतो एवं विवेक का प्रदाता है।

(४) **वायु तत्त्व**—यह तत्त्व क्षिप्तता, अविवेक, अपयश, दुःख, सम्मा मूर्खता एवं अज्ञानता को बढ़ाने में सहायक होता है।

---

१. अन्य मान्यता के अनुसार इन मण्डलों के आकार में कुछ भेद भी हैं।

(३) **अग्नि तत्त्व**—यह तत्त्व शीघ्रता, उद्वेग, क्लेश, हानि, असफलता विनाश, बहुत परिश्रम से कार्य में सफलता एव उग्र कर्म की प्रवृत्ति में सहायक होता है।

(५) **आकाश तत्त्व**—यह तत्त्व अध्यात्म-प्रेम, विरक्ति गहन-चिन्तन, मनन, अध्ययन एवं एकान्त का प्रतीक है। इन तत्त्वों के सम्मिश्रण से फल में न्यूनाधिकता आ जाती है तथा कर्म की दृष्टि से उनका उपयोग किया जाता है।

जिस यंत्र में इन तत्त्वों की आकृतियों का निर्देश हो उसके मन्त्राशय भी उन्हीं तत्त्वों के अक्षर वाले प्राप्त होने पर सिद्धि में अधिक विलम्ब नहीं होता। जिन व्यक्तियों का शास्त्रीय ज्ञान के प्रति अधिक झुकाव हो वे स्वर और व्यंजनों का भी तत्त्वशास्त्र की दृष्टि से मनन करें। उनके लिए मातृकाक्षरों का तत्त्व-विचार निम्नलिखित है—

पृथ्वी तत्त्व के वर्ण—उ, ऊ, ओ; ग, ज, ड, द, ब, ल।

जल तत्त्व के वर्ण—औ, घ, झ, ढ, ध, भ, व, स।

अग्नि तत्त्व के वर्ण—इ, ई, ऐ, ख, छ, ठ, थ, फ, र।

वायुतत्त्व के वर्ण—अ, आ, ए, क, च, ट, त, प, य, ष।

आकाश तत्त्व के वर्ण—अः, अं, ङ, ञ, ण, न, म, श, ह।

सिद्धमातृका अथवा वर्णमाला के ही विस्तार पर मन्त्रराशि का निर्माण होता है। शास्त्रों में निर्देश है कि पहले मातृका के वर्णों की उपासना कर लेनी चाहिए जिससे मंत्रसिद्धि में सहायता मिलती है। इसी प्रकार अंकों की साधना तथा यंत्रगत रेखाओं की लेखनरूप साधना की जाती है।

अंकों की संख्या वर्णमातृका के अक्षरों की क्रमागत गणना से बन जाती है। अ-१, आ-२, इ-३, ई-४, इस तरह की गणना से अंकयंत्रों के अंकों का योग किया जाए तो मंत्रों का आविर्भाव हो जाता है ऐसा भी गुरुजनों का कथन है।

साधक को यह नहीं भूलना चाहिए कि—कोई भी साधना किसी एक ही अंग से पूर्ण नहीं होती है। अपितु उसके लिए जो-जो अंग आवश्यक बताए गये हैं, उनकी पूर्ति के लिए भी पूरा आग्रह रखना चाहिए। कुछ अपवादों को छोड़कर सभी साधनाओं का पूर्णाङ्ग प्राप्त होने पर ही साधना आरम्भ करने से वह निर्विघ्न प्राप्त होती है।

६

यन्त्रों के प्रकार और उनके प्रयो[illegible]

जिस प्रकार मन्त्र और तन्त्रों के शास्त्रों में अनेक प्रकार दिखलाये गये [illegible] उसी प्रकार यन्त्रों के भी अनेक प्रकारों का निर्देश शास्त्रों में प्राप्त होता है [illegible] विधाता की सृष्टि में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जिसका स्वरूप यन्त्ररूप [illegible] हो। लौकिक दृष्टि से यन्त्र एक प्रकार से विविध पुर्जों से बनी मशीन के [illegible] को व्यक्त करता है। कोई भी मशीन हम देखें तो उसमें कई छोटे-बड़े [illegible] लगे होते हैं और वे मशीन की क्रिया में किसी न किसी तरह का सहयोग क[illegible] रहते हैं। सबसे मिलकर मशीन जो कर्म करती है उसका फल एक सिद्धि [illegible] रूप में प्राप्त होता है। इसी प्रकार शास्त्रीय यंत्रों को भी हम एक मशीन [illegible] सकते हैं। ये यंत्र अपने अन्दर छोटे-बड़े पुर्जों के रूप में अंक, वर्ण, बीज, रे[illegible] मंत्र आदि को पृथक-पृथक या एक साथ धारण करते हैं। इसी साधना में [illegible] जाने वाली क्रियाओं का फल सिद्धि के रूप में प्राप्त होकर अपेक्षित कामना[illegible] की पूर्ति में सहायक होता है।

इसी क्रियाकारित्व और फलदायकत्व तत्व के आधार पर सर्वप्रथम यं[illegible] के कुछ प्रकार निश्चित होते हैं। यथा—

१. **रेखात्मक यन्त्र**—केवल रेखाओं के गोल, आयत, समचतुरस्र [illegible] अन्य कोणमूलक यंत्रों में इनके बहुत से रूप प्राप्त होते हैं। गोल आकारों [illegible] कमल, पुष्प और पत्रादि की रचनाएं और रेखाओं से त्रिकोण, चतुष्को[illegible] षट्कोण अष्टकोण बनते हैं जब कि दोनों के योग से अनेक आयुध आदि [illegible] आकार में बने यंत्र भी प्रायः उपलब्ध होते हैं।

२. आकृतिमूलक यन्त्र—देव, मनुष्य और पशु-पक्षियों की आकृति में बनाए हुए यंत्रों का इसमें समावेश होता है। गणपति, यक्ष-यक्षिणी, मातंगिनी, घण्टाकर्ण तथा पुरुषाकार यन्त्र, गज, अश्व वृषभ, हरिण, सर्प, भारण्ड, काक आदि पशु-पक्षियों के यंत्र इस दृष्टि से स्मरणीय हैं।

इस प्रकार मूलतः रेखाओं से निर्मित विभिन्न आकृतियों में १. बीजमन्त्र, २. मंत्रवर्ण, ३. अंक तथा ४. मिश्र पद्धति के प्रयोगों से। उपर्युक्त दो पद्धतियों के पुनः चार प्रकार विकसित हुए हैं, जिनका परिचय इस प्रकार है—

१. बीजमंत्रगर्भित यंत्र—देवताओं के मंत्रों का सारभूत रूप बीजमंत्र होता है। रेखाओं द्वारा निर्मित यंत्राकृतियों अथवा कोष्ठकों में इन बीजमंत्रों का लेखन करके यंत्र की शक्ति में अभिवृद्धि की जाती है।

२. मंत्रवर्णगर्भित यंत्र—प्रत्येक देवता के गुण-रूपादि के वर्णन और विशिष्ट वर्णों के द्वारा मंत्र का निर्माण होता है। उसी मंत्र के वर्णों को यंत्र में लिखने से यंत्र और मंत्र दोनों की विशिष्ट शक्तियों का एकत्र समावेश ऐसे यंत्रों में हो जाता है।

३. अङ्कगर्भित यंत्र—देवताओं, वर्णों अथवा अन्य सांकेतिक रूप में स्वीकृत अंकों को विशिष्ट पद्धति से लिखकर ऐसे यंत्र बनाए जाते हैं। इन यंत्रों में १ से ९ तक के अंकों से बने यन्त्र तथा किसी एक निश्चित संख्या के पूरक यंत्र प्रमुख हैं।

४. मिश्र विधिमूलक यंत्र—उपर्युक्त विधियों को ही कहीं दो विधियों का और कहीं तीनों विधियों का मिश्रण करके भी यंत्र बनाए जाते हैं। अतः कहीं मंत्र-वर्ण, कहीं बीज-मंत्र तो कहीं अंक अथवा तीनों एक साथ लिखकर आकृतियों को पूर्ण किया जाता है।

शास्त्रीय प्रयोगों की दृष्टि से अन्य सात प्रकार—यंत्रों के शास्त्रीय दृष्टि से जो प्रयोग होते हैं उनके सात प्रकार प्राप्त होते हैं जो इस प्रकार हैं—

१. **शरीर यन्त्र**—हमारा शरीर स्वयं एक यंत्र है और इसमें
प्रकार के छोटे-बड़ें पुर्जे लगे हुए हैं जिनके चलने से शरीर चलता
रहता है और सभी चेतन क्रियाएं करता रहता है। ऐसे शरीरगत यंत्र
हैं। उन्हीं में से मुख्य रूप से १. मूलाधार, २. स्वाधिष्ठान, ३. म
४. अनाहत, ५. विशुद्ध और ६. आज्ञाचक्र। इन ६ चक्रों को यंत्र रूप में सं
किया गया है। मस्तक के ऊपर एक सहस्रार-चक्रयंत्र की भी कल्पना की
है। इन यंत्रों को धारण करके आम्नाय-क्रम से साधना की जाती है।
के अलग-अलग मंत्र हैं जिनका स्मरण करने से विभिन्न प्रकार के फल
होते हैं। अतः इन्हें शरीर-यंत्र कहते हैं।

२. **धारक यन्त्र**—पूर्वोक्त यंत्रों की प्रतिष्ठा करके निश्चित वस्
लिखकर शरीर के निश्चित अंगों पर धारण करने से कार्य सिद्ध होते हैं।
यंत्रों के लिए अनेक प्रकार की विधियों का स्वतंत्र उल्लेख भी प्राप्त होता

३. **आसन यन्त्र**—साधना करने के समय बैठने के आसन के नीचे
बनाकर रखे जाते हैं। उन्हें 'आसन-यंत्र' कहते हैं। ऐसे यंत्रों के बनाने की
स्वतंत्र है। इन यंत्रों पर आसन बिछा कर बैठने से शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती
आसन-यंत्र का दूसरा प्रकार देवताओं की प्रतिमा, भवन, मंदिर आदि की
में रखे जाने वाला है। प्रत्येक देवता की प्रतिमा के नीचे भी यंत्र रख
प्रभाव स्थिर रहता है।[1]

४. **मण्डल यन्त्र**—अनुष्ठान करते समय साधकों के समूह को
पद्धति से बिठाया जाता है कि उससे एक प्रकार के यंत्र की रचना हो जा
इसे हम एक प्रकार की व्यूह-रचना भी कह सकते हैं। जैसे युद्ध में हाथी,
और पैदल सैनिकों को विभिन्न रूपों में व्यूह बनाकर खड़ा किया जाता

---

१. 'आसन-यन्त्रों को पहले सवा लाख की संख्या में लिखकर सिद्ध किया ज
है और तदनंतर उन्हें पुरश्चरण विधि से पूर्णकर आसन में रख देते
इससे प्रतिदिन की जाने वाली 'आसन-विधि' की आवश्यकता नहीं रह

उसी प्रकार अनुष्ठान में यह मण्डल बनाया जाता है। इसमें नौ व्यक्ति होते हैं। प्रधान साधक मध्य में बैठकर इष्टमंत्र का जप करता है तथा चार दिशाओं तथा चार विदिशाओं में ऐसे आठ व्यक्ति अंगमंत्र और उपाङ्गमन्त्रों का आम्नायानुसार जप करते हैं। इस पद्धति से की गई साधना शीघ्र फल प्रदान करती है।[1]

५. पूजा यन्त्र—जिस देव की साधना की जाती है उसकी अधिदेव प्रत्यधिदेव, लोकपालादि के साथ स्थापना, आह्वानादि करने के लिए यह यंत्र बनाया जाता है। इस यंत्र की रचना कई प्रकारों से होती है—(क) देवताओं की स्थापना के स्थानों पर अंक लिखे जाते हैं जिनके अनुसार पूजा करते समय उन-उन देवताओं की नाम यंत्रों से पूजा की जाती है। (ख) पूरे यंत्र में जिस स्थान पर जिस देव की पूजा करनी हो उसका नाममंत्र लिखा जाता है। दिशा-विदिशाओं में वर्णमाला और दिक्पालों के नाम-मंत्र रहते हैं। (ग) कुछ यंत्र केवल मंत्रों को लिखकर ही बनाये जाते हैं। ऐसे यंत्रों में कहीं पूरे मंत्र, कहीं मंत्रों के केवल आरम्भाक्षरों के प्रतीक, कहीं बीजमंत्र आदि रहते हैं। (घ) कुछ यंत्रों में इष्टदेव या इष्टदेवी के चित्र-रेखांकन दिए जाते हैं तो कोई (ङ) इन यंत्रों को विविध रंगों में चित्र बनाकर भी अंकित करते हैं।

६. छत्र यन्त्र—पूर्वलिखित यंत्रों में से किसी एक यंत्र को विधिपूर्वक बैठने के स्थान पर छत्र में, छत में अथवा चंदोवे के अंदर लिखा जाता

---

१. इस प्रकार मण्डल-यंत्र के रूप में आराधना का प्रकार अहमदाबाद के निकट साबरमती गांव से पूर्व की ओर मोरा गांव के महादेव 'बलातिबला महाशक्तिपीठ' पर होती है। यह स्थान अति रमणीय है। यहां अग्निकुण्डाकार में 'श्रीयंत्र' की स्थापना पूर्ण कर कुण्ड को केंद्रित करके एक वृत्ताकार स्थण्डिल पर पद्धति के अनुसार चौबीस आसन हैं। इनमें प्रथम गोलार्ध में आठ आसन आरस के पत्थरों पर विधिपूर्वक श्रीयंत्र खुदवाकर प्रतिष्ठित किये गये हैं। इन यंत्रमय पीठों पर दीक्षित साधक बैठकर आहुति प्रदान करते हैं।

है वह 'छत्र-यंत्र' कहलाता है। यही यंत्र टोपी, पगड़ी या साफे में रख जाता है।

७. दर्शन यन्त्र—इसी तरह कुछ यंत्र दर्शन यंत्र भी होते हैं जिन्हें देखने से दर्शक को लाभ तो होता ही है, साथ ही जहां लगाया जाता है उस स्थान का भी उत्तरोत्तर प्रभाव बढ़ता रहता है। भारत में ऐसे अनेक स्थान हैं जहां सिद्ध यंत्र बने हुए हैं और उनके प्रभाव से वे स्थान नित्य प्रभावशाली बने हुए हैं। जगन्नाथपुरी में 'भैरवी-यन्त्र' और श्रीनाथद्वारा में 'सुदर्शन-यन्त्र' इसके उदाहरण हैं।[1]

इस प्रकार उपर्युक्त कर्मों की दृष्टि से बनने वाले यंत्रों में शास्त्रीय दृष्टि से कुछ आलेखन-भेद भी होते हैं जिन्हें यहां विस्तार-भय से नहीं लिख रहे हैं।

वस्तुतः यंत्रशास्त्र एक महत्वपूर्ण शास्त्र है। अति प्राचीन काल से हमारे पूर्वाचार्यों ने इस शास्त्र के विकास में पूरा योगदान किया है। वर्षों की साधना के पश्चात् लेखन के क्रम निश्चित किए हैं और उनके फलों की प्राप्ति के उपाय ढूंढ़ निकाले हैं।

इस विषय पर एक व्यवस्थित पद्धति से अनुसंधान किया जाए तो ऐसे लाखों यंत्रों के स्वरूप हमें प्राप्त होंगे जिनमें तर-तमता के साथ अनेकरूपता भी परिलक्षित हो सकेगी।

वैसे तो विश्व के व्यवहार की आधार-शिला कहे जाने वाले अक्षर तथा अंकों की महिमा प्रसिद्ध ही है। इन दोनों का अर्थगर्भित संयोजन एक विशिष्ट प्रकार की सामूहिक शक्ति का प्रकटीकरण करता है। जिस प्रकार मंत्रों में मंत्रबीज सहित अथवा रहित शब्दों का—वर्णों का प्राधान्य है उसी प्रकार यंत्रों में विविध संख्या वाले अंकों और अक्षरों सहित बनी आकृतियों का प्राधान्य है।

---

१. ऐसे ही अभिषेक के लिए जो यंत्र बनते हैं वे अभिषेक-यंत्र कहलाते हैं।

यंत्रों की अनेक जातियां और प्रकार हैं। यंत्र बनाने की गणित-संबंधी प्रक्रिया ऐसी है कि उससे लाखों यंत्र बनाए जा सकते हैं। इसी प्रकार प्रयोग की दृष्टि से इनके लाखों रूप बनते हैं और प्रयोग-पद्धतियों में भी इसी दृष्टि से अनेकरूपता आ जाती है। कभी यन्त्र को लांघने से उसका फल होता है तो कभी उसके नीचे से निकलने पर। कभी यन्त्र को धोकर पीने से फल होता है तो कभी यन्त्र को गाड़ देने से। स्तम्भन प्रयोग में यन्त्र को एक शिलाखण्ड पर लिखकर उस पर दूसरी शिला को रख दिया जाता है। ऐसे प्रयोगों का कोई पार ही नहीं है। इसमें गुरु परम्परा का ही सबसे अधिक महत्त्व है। जैसा प्रयोग करते हुए यन्त्रज्ञ ने फल प्राप्त किया हो उसी पद्धति से उत्तरोत्तर प्रयोग करते रहने से सिद्धि मिलती रहती है।

ऐसे अनेक दृष्टांत—किंवदंतियां परम्परा से सुनने को मिलती हैं कि 'अमुक यंत्र का अमुक पद्धति से प्रयोग करके अमुक कार्य सिद्ध किया गया।' यंत्रों के दस अंग होते हैं—

बीजं प्राणं च शक्तिं च दृष्टि वश्यादिकं तथा।
मन्त्रं यन्त्राख्यगायत्री प्राणस्थापनमेव च॥

अर्थात्—१. बीज, २. प्राण, ३. शक्ति, ४. दृष्टि, ५. वश्यादि, ६. मन्त्र, ७. यन्त्र-गायत्री, ८. प्राण-स्थापन, ९. भूतबीज तथा १० दिक्पाल बीज ये दस यंत्र के अंग हैं। इनका भी विचार यथासमय किया जाना चाहिए।

आधुनिक विज्ञान और यन

आज विज्ञान बहुत आगे बढ़ चुका है। मानव की सभी भौतिक आव-कताओं की पूर्ति का कार्य विज्ञान द्वारा साध्य बनता जा रहा है। अत: वि और मानव एक दूसरे के पर्यायवाची बन गए हैं। विज्ञान की विकास-धा में यंत्रों का बहुत बड़ा हाथ है। प्रत्येक वस्तु के निर्माण के लिए छोटे से छो और बड़े-से-बड़े यंत्रों का उपयोग किया जाता है तथा बड़ी-बड़ी यंत्रशाला के सहारे अनेक लौकिक सुख-सामग्रियां तैयार की जाती हैं।

प्राचीन काल में बाहरी आडम्बरपूर्ण यन्त्रों का निश्चय ही अभाव था किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं लगाना चाहिए कि प्राचीन काल के लोग इ प्रकार के भौतिक यंत्र-ज्ञान से अपरिचित थे। क्योंकि पुराशास्त्रों में ऐसे अने प्रमाण मिलते हैं जिनमें नाना प्रकार के अद्भुतकर्मी यंत्र तत्कालीन समाज भौतिक आवश्यकता की पूर्ति में सहायक होते थे। महाभारत काल में तो ऐ यंत्रों की संख्या पर्याप्त अधिक थी।

इस प्रकार आधुनिक एवं प्राचीन युग के भौतिक यंत्रों के रहते हुए मानव संतुष्ट नहीं हुआ। उसकी बुद्धि सदा यह सोचती रही है कि इ परस्पराश्रयापेक्षी यंत्रों की अपेक्षा यदि आध्यात्मिक श्रम द्वारा स्वतंत्र यं की साधना द्वारा अपेक्षित कार्यों की सिद्धि मिल जाती हैं तो उनका आश्र लेना सर्वथा उपयुक्त होगा। यही कारण है कि सभी आराध्य देव-देवि के यंत्र उपयोग में लाए जाने लगे और प्रत्येक आस्तिक और नास्ति यंत्रोपासक बन गया।

एक युग ऐसा भी आया कि इन यंत्रों का प्रयोग एवं साधन इतना बढ़ गया कि कोई भी 'घर यंत्र के प्रभाव से शून्य नहीं रहा। जैसी जिसकी धारणा हुई उसी की पूर्ति के लिए यंत्र की साधना प्रचलित हो गई। सिद्ध पुरुषों ने यंत्र-सिद्धि के आधार पर ही ऐसे-ऐसे अनूठे कर्म कर दिखाए कि द्रष्टा आश्चर्य में डूबे बिना नहीं रह सके। लौकिक एवं शास्त्रीय यंत्रों की अधिकता ने सर्वसाधारण का मन आकृष्ट किया। समय-समय पर सिद्ध किए गए यंत्रों को धारण कर जन-साधारण अपनी नानाविध विपदाओं से मुक्त हुआ, सम्पदाओं का धनी बना और दुर्लभ को सुलभ बनाने में भी सफल हुआ।

वैज्ञानिक यंत्र द्रव्य साध्य तो हैं ही, साथ ही उनको चलाने के साधन और उनके सूक्ष्म ज्ञान के कारण भी सर्वसुलभ नहीं हैं। ऐसे यंत्र कभी-कभी पराश्रयी होने के कारण स्वतंत्रता में बाधक हो जाते हैं तो कभी-कभी उनके प्रयोग से विपरीत परिणाम भी निकल आते हैं जो अनिष्टकारी सिद्ध होते हैं।

आध्यात्मिक यंत्र आत्मतंत्र पर निर्भर रहते हैं। व्यक्ति अपनी अभिरुचि के अनुसार इनका प्रयोग कर सकता है। ये शुद्ध रूप से स्वाश्रयी होते हैं। स्वयं साधना रूप प्रयत्न से साध्य होने के कारण आत्मबल, मनोबल एवं कर्मबल के प्रेरक होते हैं। ऐसे यंत्रों से देवता प्रसन्न होते हैं। वे स्वयं यंत्रों में अधिवासित होकर हमारी रक्षा करते हैं, सद्बुद्धि प्रदान करते हैं और अनिष्टों का निवारण करते हैं।

सात्त्विक यंत्रों का प्रभाव चिरस्थायी होता है। भारत के विभिन्न स्थलों में उत्तम साधना-पूर्वक स्थापित किए गए यंत्रों का प्रभाव आज भी देखा जा सकता है। उदाहरणार्थ—जगन्नाथ मंदिर का भैरवीचक्र-यंत्र[1], श्रीनाथ जी के

---

१. इसके बारे में यह पद्य भी सुप्रसिद्ध है—

प्रवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः।
निवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक्॥

मंदिर का सुदर्शन चक्र यंत्र, तिरुपति बालाजी में निहित श्रीयंत्र आदि का
सर्वविदित है। बहुत-से साधकों ने यंत्रों के द्वारा समय-समय पर ऐसे
दिखाये हैं कि जो वैज्ञानिक यंत्रों के द्वारा कदापि सम्भव नहीं हैं। अत
यंत्रों की निष्ठा-पूर्वक साधना करके आत्मकल्याण करना चाहिए।

यहां यह भी स्मरणीय है कि—

वर्तमान वैज्ञानिकों ने उपर्युक्त आध्यात्मिक यंत्रों की सत्यता जा
लिए भी कुछ यंत्र बनाए हैं, जिनके आधार से वे इनका प्रभाव जान
तदनुसार कुछ प्रयोग करने पर यह भी देखा गया है कि इन आध्यात्मिक
के आधार से उन यंत्रों में शारीरिक और मानसिक प्रभाव स्पष्ट परिल
हो जाते हैं।

इसी प्रकार इन आध्यात्मिक यन्त्रों से एक और विशिष्ट लाभ यह
है कि इनके धारण से अथवा घर में रखने से शत्रुओं द्वारा किए गए मंत्र-
भी सफल नहीं होते हैं। अतः निश्चय ही वैज्ञानिक यन्त्रों से आध्यात्मिक
महत्त्वपूर्ण हैं।

८

लौकिक साधना-पद्धति में यन्त्र-प्रयोग

यह सर्वविदित है कि शास्त्रीय विषय जब जनसाधारण तक पहुंचता है तो उसमें कुछ न कुछ मिश्रण, सरलता एवं अनुभवों का सम्पुट भी एकीभूत हो जाता है। यंत्रों के बारे में भी यही बात कही जा सकती है। हजारों वर्षों से चली आई परम्परा में अपने-अपने अनुभव और अपपी-अपनी गुरु-परम्परा के आधार पर यंत्रों के शास्त्रीय प्रयोगों के साथ-साथ लौकिक प्रयोग भी प्रचलित हो गए हैं। इनके अतिरिक्त एक अन्य कारण यह भी है कि यहां विभिन्न देश और विदेश की संस्कृतियों का संगम भी होता रहा है, जिसके परिणाम-स्वरूप अन्यान्य धर्म-गुरुओं द्वारा किए जाने वाले यंत्र-प्रयोगों की पद्धति ने भी हमारे यंत्रों के साथ सामंजस्य स्थापित किया है।

बौद्ध संस्कृति यद्यपि भारतीय संस्कृति ही है तथापि उसके आचार-व्यवहार एवं कर्मकाण्ड में कई प्रकार के परिष्कार हुए हैं और उसके विदेशों में प्रचारित हो जाने के बाद और भी अधिक नवीनता आई है। बौद्ध धर्म में भी मंत्र-तंत्र और यंत्रों का बड़ा प्रचलन रहा है। जन-साधारण के कष्ट-निवारण का प्रमुख ध्येय रखकर बौद्ध भिक्षुओं ने यंत्रों का विशाल प्रचार किया। पूजा के यंत्र और धारण-यंत्र दोनों ही प्रकारों में पर्याप्त विस्तार इसमें प्राप्त हुआ है।

जैन संस्कृति भी भारतीय संस्कृति ही है। जैन धर्मानुयायी बौद्धों की तरह ही सनातन आर्य संस्कृति के साथ-साथ चलते रहे हैं और अपनी मर्यादा के अनुसार यथासमय न्यूनाधिक संशोधन, परिवर्धन या परिवर्तन भी लाते रहे हैं। जैन सम्प्रदाय में यंत्रों की संख्या अति विस्तृत है। यंत्र-पट (बड़े

वस्त्र पर सपरिकर यन्त्रों का निर्माण) इस सम्प्रदाय में बहुत प्रचलित है। बौद्धों ने बुद्ध और उनके सम्प्रदायानुसारी यक्ष-गंधर्वों के यंत्र जिस प्रकार निर्मित किए हैं उसी प्रकार जैन धर्म ने भी जैन सम्प्रदाय के अनुसार देव-देवी, यक्ष-यक्षिणी और ग्रहादि के यंत्रों का प्रचार किया है। ऋद्धिमण्डल एवं सूरिमंत्र-यंत्र जैसे विशाल यंत्र इसमें अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

यवन संस्कृति के भारत में फैल जाने पर इसके फकीरों, ओलियाओं तथा धर्मगुरुओं ने भी अपनी तांत्रिक-प्रक्रियाओं का प्रचार-प्रसार इस देश में किया। जैसे हमारे यंत्रों में अपने देव-देवियों के नाम अंकित रहते हैं और बौद्ध या जैन धर्मानुयायी अपने इष्टदेवों की उपासना के लिए यंत्रों का प्रयोग करते हैं वैसे ही मुस्लिम धर्मानुयायी भी स्वधर्मानुसार यंत्रों की रचना करते हैं। अंक यंत्रों में तो प्रायः सनातन धर्म के पंचदशी, विंशति आदि संख्या के यंत्र पूर्णतया समान ही हैं। हां, साधना-विधि में अन्तर अवश्य हुआ है।

आज तो पारसी, सिक्ख, ईसाई तथा अन्य मतावलम्वी भी यंत्रों के महत्व को स्वीकार करते हैं। ईसाइयों का क्रॉस चिह्न तो वस्तुतः यंत्र ही है।

इस तरह लोक में यंत्र की व्यापकता हो जाने पर लौकिक साधना-पद्धतियों में यंत्रों के प्रयोग होने लगे और वे आज सर्वप्रिय बने हुए हैं। ऐसे प्रयोगों में यंत्र-ताडन अब जूते से पीटने की स्थिति में आ गया है। शंकु गाड़ने का स्थान कील ठोकने पर पहुंच चुका है। महाकुण्ड में यन्त्रों का जो हवन होता था उसे अब आग मे डाल कर सिद्ध किया जाता है।

१
यन्त्र लेखन-विधि

यंत्र लिखने का आरम्भ कहां से किया जाए ? यह प्रश्न मन में सर्वप्रथम उठता है। इसके समाधान के लिए पूर्वाचार्यों ने सीधा निर्देश न करते हुए स्थान-स्थान पर संकेत किए हैं। लिखने का क्रम दिशाओं के आधार पर निश्चित किया जाता है। पूर्व से पश्चिम की ओर जाने की पद्धति सीधी मानी गई है। इसका आशय यह है कि यंत्र की रेखा का आलेखन पूर्व से पश्चिम की ओर होना चाहिए। इस प्रकार का लेखन सौम्य कर्म के लिए उत्तम है। यदि उच्चाटन, मारण जैसे उग्र कर्म के लिए यंत्र लिखना हो तो विपरीत क्रम अपनाना चाहिए। अर्थात् पश्चिम से पूर्व की ओर आना चाहिए। उन्नत कर्म के लिए नीचे से ऊपर की ओर तथा अवनत कर्मों के लिए ऊपर से नीचे की ओर लिखना चाहिए।

इसी पद्धति को अन्य ग्रन्थों में परिष्कृत करते हुए (१) सृष्टि, (२) स्थिति और (३) संहार क्रम से लिखने का आदेश दिया है। यंत्र का प्रथम भाग जो केन्द्र रूप में होता है वहां से लिखना आरम्भ करके भूपुर तक जो लिखा जाता है, वह **'सृष्टि-क्रम'** कहा जाता है। मध्य से आरम्भ करके अन्त तक तथा आदि से मध्य तक लिखने की पद्धति को **'स्थितिक्रम'** कहा जाता है। तथा अन्त से आदि तक लिखने की प्रक्रिया को **'संहारक्रम'** कहा गया है।

अंकयंत्रों को लिखते समय सामान्यतः **'आरोहक्रम'** से अंक लिखे जाने चाहिएं। अर्थात् सबसे छोटी संख्या पहले लिखकर बाद में आगे-आगे अंक बढ़ाकर लिखते जाएं। यह नियम साधारण है; किन्तु जिन यन्त्रों के लिए किसी विशेष अंक का स्वतंत्र निर्देश किया गया हो, उनमें तो वही नियम मानना

चाहिए। ऐसे निर्देशों के साथ कर्म और कामना की दृष्टि से भी आरम्भ का उल्लेख रहता है।

इसके अतिरिक्त यह बात भी स्मरणीय है कि अंकयंत्रों में प्रत्येक अंक के पृथक्-पृथक् देवता होते हैं। अतः यदि उन देवताओं में से किसी कामना-विशेष की दृष्टि से यंत्र का प्रयोग करना हो, तो उस देवता के अंक को ही प्रथम मानकर आगे के अंक भरे जाने चाहिएं।

बीजमन्त्र और मन्त्रादि से अंकित यंत्रों में अक्षरों के लिखने का क्रम आरम्भ से अन्त के अक्षर तक का रहता है। किंतु उसमें संहार-पद्धति से लिखना हो, तो अंतिम अक्षर से आदि तक विपरीत क्रम से लिखना चाहिए।

यन्त्रलेखन के समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि यंत्र किस कार्य के लिए लिखा जा रहा है। वह धारण के लिए हो, तो उसकी पद्धति पृथक् होगी और उसकी प्रतिष्ठा भी अधिक दिन साध्य होगी। यदि पूजा के यंत्र बनाने हों तो उनमें भूपुर के द्वार खुले रहते हैं और अन्य यंत्रों में द्वार बंद रहते हैं। ऐसी ही और कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थियां हैं जिनका गुरु परम्परा से ज्ञान कर लेना भी आवश्यक है।

अनेक यंत्रों में 'देवदत्त' अथवा 'अमुक' शब्द लिखा रहता है। ये शब्द जहां हों, वहां जिस व्यक्ति के लिए यंत्र तैयार किया जा रहा हो, उसका नाम लिखना चाहिए। इसी प्रकार जिन यंत्रों के आस-पास लिखे जाने वाले मंत्रों में 'मम' लिखा हो, वहां यदि वह यंत्र किसी दूसरे के लिए बनाया जाना हो, तो वहां उस व्यक्ति का नाम षष्ठी विभक्ति का एकवचन लगाकर लिखें अथवा 'धारकस्य' ऐसा भी लिख सकते हैं।

१०

यन्त्रों में लिखे जाने वाले अंकों का महत्त्व और विधि

जिस प्रकार शास्त्रों में मंत्रों की रचना में कुछ सार्थक अथवा निरर्थक वर्णों की योजना की जाती है, जैसे कुछ संयुक्त वर्णों के संयोजन से बीजमंत्र और कूटाक्षरों की व्यवस्था होती है उसी प्रकार अंकों की योजना भी अपने-आप में पूर्ण महत्व रखती है। यह तो प्रसिद्ध ही है कि कोई एक अंक अपने पास दूसरे अंक के आ जाने पर दस गुना महत्व प्राप्त कर लेता है। 'बिहारी' कवि ने सच ही कहा है कि—'कहत सबै बेंदी दिए अंक दस गुनो होत।' बिन्दु अकेली अपना कोई अस्तित्व नहीं रखती है और जब वह किसी अंक से संयुक्त हो जाती है तो उसका प्रभाव बढ़ता है। अतः यह कहा जाता है कि मूलतः अंक नौ ही हैं। शेष परस्पर मिलकर ही समस्त अंक-शास्त्र के परिचायक बनते हैं।

१. यन्त्रों की फलकारक शक्ति

जैसे वर्णों के संयोजन से निर्मित मंत्र प्राणी को ही नहीं, अपितु ईश्वर को भी अपने अधीन बना लेते हैं—'मन्त्राधीनास्तु देवताः' वैसे ही अंक भी अपने समान तत्व के साथ संयुक्त हो जाने से एक विशिष्ट शक्तिपुंज को अपने अधीन बना लेते हैं। अंकों में वर्णबीजों की शक्ति साररूप में संचित होती है और मंत्रों की संचित शक्ति बीजों में साररूप से अवतरित होती है। अतः मंत्र, बीज और अंकों में क्रमशः उत्तरोत्तर शक्ति वैशिष्ट्य रहता है। यही कारण है कि इन दोनों का यंत्र में समावेश होने से यंत्रों की फलकारक शक्ति अन्यापेक्षा अधिक होती है।

२. बीजमन्त्र और अङ्क

बीजमन्त्रों से अंकों का ज्ञान भी शास्त्रों में वर्णित है। जैसे कामबीज से १, ५, २। गुरुबीज से ४, ६, ८। रमाबीज से ५, ७, ६। तेजोबीज से ८, ६, २। शान्तिबीज से ८, ७, ०। रक्षाबीज से ०, ५, २, ७ और योग बीज से ९, ५, ३, २, ७ का ज्ञान होता है।

जिस प्रकार धातु और रासायनिक पदार्थों के विचार और मात्रापूर्वक मिश्रण से विद्युत् शक्ति उत्पन्न होकर प्रकाश देती है, उसी प्रकार मन्त्रों में अक्षर और यन्त्रों में अंकों का मिश्रण होने से असीम शक्ति उत्पन्न होती है। इस सूक्ष्म शक्ति के द्वारा ही वर्णाक्षरों तथा अंकाक्षरों के स्वाभिमानी देवगण फल देते हैं।

३. अङ्कात्मक नौ शक्तियां

यह सूक्ष्मशक्ति तभी सक्रिय होती है जब कि १. प्राणशक्ति, २. (अन्तःकरण की) शुद्धिशक्ति, ३. भावशक्ति, ४. संयमशक्ति, ५. संकल्पशक्ति, ६. ज्ञानशक्ति, ७. क्रियाशक्ति, ८. इच्छाशक्ति और ९. मनःशक्ति नामक नौ शक्तियों का योग होता है। ये नौ शक्तियां ही नवदुर्गा के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनके साथ बिन्दु (शून्य) का योग होने पर दस महाविद्याओं का स्वरूप प्रतिभासित होता है। इन शक्तियों के माध्यम से अंकयन्त्रों में अङ्कयोजना होने से यन्त्र अपूर्व शक्तिशाली बन जाते हैं।

४. अङ्कयन्त्रों के चार प्रकार

'यन्त्र चूडामणि' ग्रन्थ में अङ्कयंत्रों के चार प्रकार दिखलाए हैं जिनमें १. एकाङ्कयन्त्र, जिनमें प्रत्येक कोष्ठक में एक-एक अंक ही रहता है, जैसे—पञ्चदशी। २. एकाधिकाङ्कयन्त्र— जिनमें दो अंकों वाली संख्या अथवा दो से अधिक अङ्कों वाली संख्याएं लिखी जाती हों। ३. मिश्रसंख्यामय— जिनमें कहीं एक अंकवाली संख्या और कहीं दो या दो से अधिक अंकोंवाली संख्या

अंकित हो तथा ४. वर्णाङ्कयन्त्र—जिनमें वर्ण-वीज और अङ्क दोनों एक साथ अथवा भिन्न-भिन्न कोष्ठकों में लिखे जाते हों।

५. ज्योतिष और अङ्कयन्त्र

वीजाक्षरों और अंकाक्षरों, का सम्बन्ध नक्षत्रों, राशियों और ग्रहों से भी घनिष्ठ है। नक्षत्रों की संख्या २७ है। राशियों की संख्या १२ है तथा ग्रहों की संख्या ९ है। यद्यपि ये ज्योतिष शास्त्र से सम्बन्ध रखते हैं तथापि इनकी अंक संख्या को यन्त्रों में भी स्थान देकर उनका महत्व बढ़ाया गया है।

कुछ यन्त्रों में हम देखते हैं कि संख्याओं की गणना-पूर्ति के लिए कुछ अंकों को दो-दो बार भी लिख लिया जाता है। अथवा एकांक वाले यन्त्र में संख्या पूर्ति के लिए दो अंकों वाली संख्या भी लिखी जाती है। ऐसे यंत्र निश्चित ही मध्यम कोटि के कहे जाते हैं। किन्तु इससे उनका फलदातृत्व कम नहीं होता।

६. कोष्ठक चिन्तामणि के आधार पर अन्य चार प्रकार

प्राकृत ग्रन्थ **'कोट्ठगचिन्तामणि'** के रचयिता वामनाचार्य श्री शीलसिंह ने विविध प्रकार के यन्त्रों की चर्चा की है। इस ग्रन्थ की रचना विक्रम की १६वीं शती में हुई थी। इसमें प्रायः १०० गाथाएं थीं। इसका मूल भाग तो उपलब्ध नहीं हो पाया है; किन्तु एक टीका संस्कृत में प्राप्त होती है जो सम्भवतः इस पर लिखी हुई स्वोपज्ञ टीका है। इसमें यन्त्रों के प्रकारों का अनेक प्रकार से निरूपण किया गया है। यथा—

जिन यन्त्र-कोष्ठकों में लिखे अंकों को सभी ओर से जोड़ने पर एक निश्चित संख्या ही आती है, जैसे १५ अथवा २० के यंत्र, उनके चार प्रकार बतलाये गये हैं। उनमें १. भद्र जिसमें चारों कोणों की जोड़ समान आती हो, २. अतिभद्र जिसमें आठों दिशाओं की जोड़ समान आती हो, ३. सर्वतोभद्र जिसमें सभी ओर से खण्डशः जोड़ करने पर समान योग आता हो तथा ४. महासर्वतोभद्र जिसमें विभिन्न प्रकार के खण्ड करके जोड़ करने पर भी एक समान ही योग आये, ऐसे भेद दिखाये हैं। अन्तिम महासर्वतोभद्र के लिए उदाहरणार्थ वहां एक

यंत्र दिया है जो कि २४ तीर्थङ्करों का यंत्र है। उसके ४-४ कोष्ठकों की जोड़ प्रायः ७० या ७२ प्रकारों से होती है और सभी में एक समान ही जोड़ प्राप्त होती है। वहीं अंकों के साथ अक्षर, नाम, काम्यकर्म निर्देश आदि से युक्त यन्त्रों के प्रकारों का भी विवरण है।

ऐसे यन्त्रों की रचना से होने वाले फलों का निर्देश एक प्राचीन प्रति के आधार पर हमें प्राप्त हुआ है, जिसमें १६ कोष्ठकों में लिखे जाने वाले अंकों की संख्या के अनुसार भिन्न-भिन्न यंत्रों के फल दिखलाये गये हैं। इसके रचयिता जैन पण्डित अमरसुन्दर हैं। यहां ५० हजार तक के यंत्रों के फलों का वर्णन दिया गया है तथा और भी ऐसे यंत्रों का फल अन्य ग्रन्थों में वर्णित है, जिसे हम अगले प्रकरण में दे रहे हैं।

११

अंक-यन्त्रों की अपूर्व महिमा

(पण्डित अमरसुन्दर रचित छन्द)

जिण चौवीशे पय प्रणमेवि सह गुरु तणा वचन निसुणे वि ॥
यंत्र तणो महिमा अतिघणो, भावे छौलूं भवियण सुणौ ॥ १ ॥
'शोले कोठे' लिखियें 'बीश', सघला भय टाले जगदीश ॥
'अठावीसमां' रोग भय हरे, 'छत्रीशे' द्युति जय करे ॥ २ ॥
'त्रीशे' वलि सायणि नासंति, 'बत्रीशे' सुख प्रसवते हुंति ॥
देव ध्वजा जो लखियें इमे, परचक्र भय न होवे किमें ॥ ३ ॥
घर बारणे जो लिखिये एह, कामण नव पराभवे तेह ॥
शाकणि संहारी न हुवे तिहां, 'चौत्रीसो' यंत्र लखियै जिहां ॥ ४ ॥
'चालीशे' शीस रोग टले, पागे वयरी हेला दले ॥
अने चली ठा करवे वहुमान, वसुधा वलीं वधारे मान ॥ ५ ॥
'बांसठे' संध्या गर्भज धरे, ।सा वयण सद्गुरु उच्चरे ॥
'चौशठ' नो महिमा छे घणो, मार्गे भय न होवे कोई तणां ॥ ६ ॥
वारिभय रिपु शाकिणी तणां, 'चौशठना' महिमा नहीं मणां ॥
'बावत्तरी' भूत भूरि जेह, जूझे नर जंय पामे तेह ॥ ७ ॥
'पंचत्राशी' पंथे भय हरे, 'अठयोतरशौ' शिव सुख करे ॥
'वींसोरशौ' नयणे निरखंत, प्रसव-वेदना ते नवि हुंत ॥ ८ ॥
'बावनशौ' नौ ऊली नीर, मुख धोवे होने बाहवो वीर ॥
सत्तरिसय नो महिमा अनंत, तुच्छ बुद्धि छिम जाणो जंत ॥ ९ ॥

'एक सौ बहुत्तरौं' यंत्र प्रभाव, बालक ने टाले दुष्ट भाव ॥
'बिहुसौं' नौ यंत्र लिखिये वार, वाणिज्य घणा होय हाट मझार ॥१०॥
'त्रणशें' नरनारी नौ नेह, विणठौ बाधें नहीं संदेह ॥
'चारशें' घर भय नवि होय, कण उत्पत्ति घणी खेत्रे जोय ॥११॥
'पांचसें' महिला गर्भज धरे, पुरुषह ने पुत्र संतति करे ॥
'छशें' यंत्र होय सुखकार, 'सातसें' झगड़े होय जयकार ॥१२॥
'नवसें' पंथे न लागे चोर, 'दशसें' दुख न पराभवें घोर ॥
'इग्यारसें' छेजे वीव दुष्ट, तेहना भय टाले उत्कृष्ट ॥१३॥
बंदी मोक्ष 'बारसें' होय, 'दश सहसें' पुनः तेहिल जोय ॥
वली सयलनी रक्षा करै, एम यंत्र तणी महिमा विस्तरे ॥१४॥
'पंच्चाससें' राजादिक मान, शाकणी दोष निवारण जान ॥
कंठे तथा मस्तक जे धरे अशुभ कर्म ते शुद्धज करे ॥१५॥
'बावनना' नो मस्तके तथा कंठे क्षेत्रपालनो हित सदा ॥
'पणयालीस' शिरै कंठे होय, सर्ववश्य थाये तस जोय ॥१६॥
कुंकुम गोरोचन चंदनसार, मृगमदसौं चौदश रविवार ॥
पवित्र पणे पुष्य मूल नक्षत्र, एकमना जो लखिये यंत्र ॥१७॥
पार्श्व जिनेश्वर तणे पसाय, अलिय विघन सब दूर पलाय ॥
'पंडित अमर सुन्दर' इम कहै, पूंजे परमारथ लहे सब ॥१८॥

—x—

यंत्र-महिमा छंद का भावार्थ

२०. बीसा यंत्र सोलह कोठे में लिखकर पास में रखने से सभी तरह के का नाश होता है।

२८. अठ्ठाइसा यंत्र रोगभय को नष्ट करता है।

३०. तीसा यंत्र से शाकिनी भय नष्ट होता है।

३२. बत्तीस के यंत्र का बालक के जन्म के समय उपयोग करने से सुखरूप से प्रसव होता है।

३४. चौंतीसा यंत्र देवध्वजा पर लिखा जाय तो शुभकारक है, परचक्र अथवा किसी के द्वारा भय प्राप्त होने वाला हो तो उसे मिटाता है, मकान के बाहर दीवार पर लिखने से पराभव नहीं होता, कामण-टुमण का जार नहीं चलता, शाकिनी आदि का पलायन हो जाता है।

३६. छत्तीसा यंत्र यदि सट्टा करने वाले लोग पास में रख कर सट्टा करें तो विजय होती हैं।

४० चालीसा यंत्र से सिर-दर्द मिटता है, वैरी पैरों में गिरता है, गांव में परगने में मान-सम्मान बढ़ता है।

६२. बासठ के यंत्र से वंध्या स्त्री को गर्भ स्थित होता है।

६४. चौंसठिये यंत्र की महिमा बहुत है। मार्ग में सर्व प्रकार के भय को नष्ट करता है, वैरिभय और शाकिनी-डाकिनी के भय से धारक बच जाता है।

७२. बहत्तरिये यंत्र से भूत-प्रेत का भय नष्ट होता है और संग्राम में विजय पाता है।

८५. पिच्चासिये यंत्र से मार्ग का भय मिटता है।

७८. अठोत्तरिया यंत्र शिवसुख दाता एवं सर्वकष्ट को नष्ट करने वाला है।

१२०. एक सौ बीस का यन्त्र बड़ा महत्त्वपूर्ण होता है जिससे प्रसव सुख रूप होता है तथा वेदना मिटती है।

१५२. एक सौ बावन के यन्त्र को पानी से धोकर मुख धोये तो भाईचारा-स्नेह बढ़ता है, भाई-बहिन का आपस में प्रेम रहता है।

१७०. एक सौ सत्तरिये यन्त्र की महिमा बहुत है। इसका वर्णन तुच्छबुद्धि मनुष्य नहीं कर सकता।

१७२. एक सौ बहत्तरिया यन्त्र से पुत्र का लाभ होता है तथा
मिटता है।

२००. दो सौ का यन्त्र दुकान के बाहर दीवार पर या किसी मांग
स्थापना के पास लिखने से व्यापार बहुत बढ़ता है।

३००. तीन सौ के यन्त्र से नर-नारी का स्नेह बढ़ता है और टूटा हुआ
फिर से जुड़ जाता है।

४००. चार सौ के यन्त्र स घर में भय नहीं रहता, खेत पर लिखने से व
कर खेत में रखने से धान्य की उत्पत्ति अच्छी रहती है।

५००. पांच सौ के यन्त्र से स्त्री को गर्भ धारण हो जाता है और साथ
पुरुष भी बांधे तो सन्ततियोग बनता है।

६००. छः सौ के यन्त्र से सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

७००. सात सौ का यन्त्र बाँधने से झगड़े-टंटों में विजय कराता है।

९००. नौ सौ के यन्त्र से मार्ग में भय नहीं होता तथा तस्कर
मिटता है।

१०००. एक सहस्रिये यन्त्र से पराजय-पराभव नहीं होता और धारण क
वाला विजय पाता है।

११००. ग्यारह सौ के यन्त्र से दुष्टात्मा की ओर से भय-क्लेश होता हो
वह मिट जाता है।

१२००. बारह सौ के यन्त्र से बंदी जेल से मुक्त हो जाता है।

१००००. दससहस्रिये यन्त्र से बंदी मुक्त हो जाता है।

५००००. पचास सहस्रिये यन्त्र स राज-सम्मान मिलता है और सब प्रकार
कष्ट मिटता है।

इस तरह प्राचीन छन्द का भावार्थ है। इसमें बताए हुए बहुत से
इस संग्रह में दिए गए हैं, यंत्र महिमा और उनसे होने वाले लाभ का
छन्द-भावार्थ से समझ में आ सकेगा। अधिक ज्ञान की जिसको आवश्यकता
वे यन्त्रशास्त्र के निष्णात से लाभ उठायें।

अङ्कयन्त्रों के अन्य पुस्तक के आधार पर फल

एक अन्य प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ में ऐसे ही अंकयन्त्रों के फल इस प्रकार दिखाए हैं—

१६ अंक के यन्त्र से चोर की बाधा नष्ट होती है।
१६ „ धान में कीड़े नहीं लगते हैं।
२० „ सर्वसिद्धि प्राप्त होती है।
२४ „ तीर का निशान नहीं लगता है।
२८ „ शाकिनी दोष दूर होता है।
३२ „ सिंह आदि का भय नहीं लगता है।
३४ „ सर्वसिद्धि प्राप्त होती है।
३६ „ बालरोगों का नाश होता है।
५० „ बालक रोना बन्द करता है।
५६ „ मोहन होता है।
६२ „ आयुष्य और बल की वृद्धि होती है।
७० „ मरतबा बुलंद होता है।
७२ „ बन्ध्या स्त्री को पुत्र प्राप्त होता है।
७८ „ सर्व रोग नष्ट होते हैं।
८० „ सेवा-फल प्राप्त होता है।
६० „ चोर चोरी नहीं करता है।
१०० „ सर्व काम-सिद्धि होती है।
१२६ „ बंधा हुआ गर्भ छूटता है।
१००० „ राज्य प्राप्ति एवं बन्धनमुक्ति होती है।
१००००० „ सर्वसिद्धि प्राप्त होती है।
१०१०००० „ मार्ग में चोर नहीं आता है।

इस दृष्टि से सभी यन्त्रों के फल समझ लेने चाहिएं। यह तो निर्देश-मात्र है।

१२

अंक-यन्त्रों की विशेषता
तथा यन्त्राधार आदि

अंक-यन्त्रों की यात्रा यहीं समाप्त नहीं हो जाती है। यह संख्या लाखों तक पहुंचती है और उसके भी यन्त्र बनते हैं। ये अंकयन्त्र आगे चल कर सर्व-भद्रात्मक, समयोग न होकर विषमयोग वाले, विषम संख्या वाले तथा सावृत्तिक संख्या वाले भी बनते हैं। इनमें मुख्य रूप से संख्यालेखन की प्रमुखता रहती है। वस्तुतः संख्याओं की योजना में कुछ ऐसे तत्त्वों का समावेश होता है कि उससे दैवी तत्त्वों का उसमें निवास हो जाता है।

एक से नौ तक की संख्याओं के देवता

उदाहरणार्थ एक से नौ तक की संख्याओं के देवताओं की तालिका एवं उनकी दिशाएं क्रमशः इस प्रकार हैं—

१. सूर्य—पूर्व,
२. भुवनेश्वरी—नैऋ‍र्त्य
३. गणपति—उत्तर,
४. हनुमान—वायव्य,
५. विष्णु-श्री—पश्चिम,
६. कार्तवीर्य—आग्नेय
७. काली—दक्षिण,
८. भैरव—ईशान,
९. भैरवी-पश्चिम।

ये ही अंक पंचदशी यन्त्र में अंकित होते हैं। अतः इन्हें पंचदशी यन्त्र देव भी कहा जाता है। समस्त संख्याओं का विस्तार १ से ९ तक के अंकों से ही होता है। अतः गुरुजनों का कथन है कि अंक-यन्त्र-साधक को चाहिए कि सर्वप्रथम पंचदशी यंत्र का ही पुरश्चरण कर ले तो बाद में सभी अंकयन्त्रों

प्रयोगों की पात्रता प्राप्त हो जाती है और सिद्धि में सरलता होती है।

अंकयन्त्रों की रचना का पद्य तथा अन्य ज्ञातव्य

सभी समसंख्या के रूप में उत्तर प्राप्त कराने वाले यन्त्रों की रचना के लिये यह पद्य प्राप्त होता है—

इच्छाकृतार्द्धं कृतरूप-हीनं-
स्तने ग्रहे षोडश सप्त चाष्टौ।
तिथिर्दशांके प्रथमे च कोष्ठे,
भवन्ति नानाविधयोऽत्र यन्त्राः ॥

इसी बात को हिन्दी दोहे में इस प्रकार कहा गया है—

युग्म २ शैल ७ षट् ६ वह्नि ३ सिद्धि ८ चन्द्र १ युग ४ शराः ५।
पंचम तृतीये एह षोडश १६ दश १० ये धरो।
एकी बेकी आंमना सुमत यन्त्र सो हो कोई करो ॥

इनके आधार पर गणित-प्रक्रिया से यन्त्र बनाने का निर्देश है।

कुछ यन्त्र ऐसे भी बनाए हुए प्राप्त होते हैं जिनके मध्य में किसी अन्य प्रकार के अंक-यन्त्र का लेखन हुआ है तथा बाहर किसी अन्य अंकयंत्र का। ये यन्त्र अति प्रभावशाली होते हैं ऐसा कहा जाता है। चौंतीसा यन्त्र और पंचदशी-यन्त्र इन दोनों के योग से बना हुआ एक प्रकार का यन्त्र हमारे देखने में आया है। इसमें सोलह कोष्ठकों को ऊपर नीचे बनाकर बीच में ९ कोष्ठकों में पचदशी यन्त्र लिखा है। इस यन्त्र का नाम 'नवनाथ-समुच्चय-यंत्र' बतलाया गया है। इसके रचना-प्रकार के लिए निम्नलिखित पद्य दिए हैं—

नव-षोडश-बाण-विरिञ्चिमुखं,
गिरिलोचन-रुद्रमनुप्रयतम्।
रविविश्वयुतं वसुशम्भु-पदं,
रसराजदिलं तिथिचक्रमिदम् ॥ १ ॥

अहिचौर-निशाचर-वैरिभयं,
ग्रहभूत-पिशाच-विनाशकरम् ।
विषम-ज्वररोग-विपत्ति हरं,
नवनाथसमुच्चयमन्त्रमिदम् ॥ २ ॥

अतः यह कहा जा सकता है कि अंक यन्त्रों की महिमा अपार है तथ उनके प्रकार भी अनेक हैं।

यन्त्र-निर्माण के विभिन्न आधार और उनका भार

वश्यार्थे भोजपत्रेषु मोहने रूप्यपत्रके ।
मारणे लोहपत्रे तु स्तम्भने पैप्पलं मतम् ॥ १ ॥

वशीकरण के लिए भोजपत्रों पर, मोहन कर्म के लिए चाँदी के पतरे पर मारण-कर्म के लिए लोहे के पतरे पर तथा स्तम्भनकर्म के लिए पीतल के पतरे पर यन्त्र बनाना चाहिए।

विद्वेषे तु श्मशानस्य चीवरं समुदाहृतम् ।
आकर्षे सीसकं प्रोक्तं राज्यार्थे ब्रह्मवृक्षजम् ॥ ३ ॥

विद्वेषण के लिए श्मशान में पहुंचे हुए मुर्दे के कपड़े पर यन्त्र बनाने का विधान है। आकर्षण के लिए सीसे के पतरे का और राज्य की प्राप्ति के लिए पलाश के पत्ते का प्रयोग करना चाहिए।

पुत्रार्थे पैप्पलं पत्रं भार्यार्थे तु तमालजम् ।
देशार्थे ह्यम्बुजं पत्रं भोगार्थे वटवृक्षजम् ॥ ३ ॥

पुत्र प्राप्ति के लिए पीपल का पत्ता, भार्या के लिए तम्बाखू का अथवा नागरबेल का पान, देश-प्राप्ति के लिए कमलपत्र और भोग-प्राप्ति के लिए वट वृक्ष के पत्ते का प्रयोग होता है।

मोक्षार्थे ताडपत्रं तु शान्त्यर्थे तु मधूकजम् ।
कामार्थे भोजपत्रे तु भक्षणार्थे कदली भवेत् ॥ ४ ॥

मोक्षप्राप्ति के लिए ताड़पत्र पर, शान्ति के लिए मधूक— महुवे के अथवा मुलहटी के पत्ते पर, काम-वासना के लिए भोज पत्र पर तथा खान-पान की सुविधा प्राप्ति के लिए कदली—केले के पत्ते पर यन्त्र लिखना चाहिए।

ताम्रजे स्यात् सदा वश्यं पात्रे पर्वत चालनम्।
ताडीने शाम्बिकापत्रे सर्व्वाभावे तु बिल्वजे ॥ ५ ॥

ताम्रपत्र पर यन्त्र लिखने से सदा वशीकरण होता है। ताम्रपात्र में लिखने से पर्वत भी चलने लगते हैं। अर्थात् कैसी भी स्थिर वस्तु हो उसका उच्चाटन हो जाता है। ताम्रपत्र, सूर्यमुखी के पत्र तथा शिव और पार्वती को प्रिय बिल्वपत्र पर अन्य पत्रों के अभाव में भी यन्त्र लिखना उत्तम होता है।

ये विधान-निर्देश कर्मों के आधार पर दिए गए हैं। वैसे सुवर्ण पर सभी उत्तम कर्मकारी और पूजा के यन्त्र बनाये जाते हैं। यह धातु सर्वोत्तम माना गया है। देव-पूजा के यन्त्रों का विधान अलग-अलग मिलता है। जैसे श्रीयन्त्र शालिग्राम शिला पर, स्फटिक पर, शिवलिंग पर तथा अन्यान्य मणियों पर बना हुआ अत्यधिक प्रभावशाली होता है। अष्टधातु को मिलाकर भी यन्त्र बनाए जाते हैं।

कुछ यन्त्रों के लिए यन्त्रों के साथ ही लिखने के लिए वही निर्देश दिया रहता है। जैसे पति-वशीकरण के लिए यन्त्र को रोटी पर लिखकर कुत्ते को खिलाना, आकर्षण में व्यक्ति-विशेष के अंग के वस्त्र पर लिखना चाहिए आदि।

वस्तुतः यन्त्र की आधारवस्तु के उपयोग की दृष्टि से हम स्थायी तथा कर्मों के माध्यम से दो प्रकार निर्धारित कर सकते हैं। उपर्युक्त वस्तुएं अधिक दिन तक स्थायी रखने के लिए बनाए जाने वाले यन्त्रों की दृष्टि से ठीक हैं।

इस सम्बन्ध में 'आकाश भैरवकल्प' में प्रत्येक यन्त्राधार वस्तु के प्रभाव का एक निश्चित समय भी सूचित किया है और उनमें स्वर्ण को चिरस्थायी और जीवनप्रभावी बतलाया है।

अस्थायी काल के लिए जिन यन्त्रों का लेखन होता है उनका कर्म्म की दृष्टि से बिल्वपत्र, पीपल, आक, तुलसी आदि के पत्तों पर लिखने का विधान है।

अतः प्रत्येक प्रयोग करने से पूर्व उसकी सम्पूर्ण विधि की जानकारी अवश्य कर लेनी चाहिए। कहा भी गया है कि—'विधिना विहितं कर्म सर्वदा सुखदं भवेत्।' विधि-पूर्वक किया हुआ कर्म सदा सुखदायी होता है।

यन्त्रों का भार—

यन्त्रों के वजन के सम्बन्ध में 'सौभाग्यलक्ष्म्यूपनिषद्' में एक पद्य दिया गया है—

उत्तमं दशनिष्कं स्यान्मध्यम पञ्चनिष्ककम्।
अधमं कर्षमात्रं स्यात् पादहीनं न कारयेत्॥

इसके अनुसार स्वर्णादि धातु के यन्त्रों का तोल दस निष्क----१६० माशे का उत्तम, ८० माशे का मध्यम और १६ माशे का (कर्ष) अधम कहलाता है। इसी प्रकार अन्य वस्तुओं का तोल भी ज्ञातव्य है। साथ ही यन्त्र की लम्बाई, चौड़ाई, ऊंचाई अथवा गहराई आदि के उल्लेख भी मिलते हैं, जिनका यथावसर विचार आवश्यक है।

१३

यन्त्र-लेखन में दिशा, काल आदि का विचार

चारों वर्णों के लिए भिन्न-भिन्न दिशाओं की ओर मुह रखकर यन्त्र लिखने का विधान शास्त्रों में इस प्रकार मिलता है—

पूर्वा नैर्ऋतिश्चोत्तरा वायुमध्याग्निदक्षिणा।
ऐशानी पश्चिमाख्या तु शस्ता विप्रजनाय च ॥ १ ॥

नैऋत्यकोण मध्य में आए ऐसी पूर्वदिशा, वायुकोण मध्य में आए ऐसी उत्तर दिशा, अग्निकोण मध्य में आए ऐसी दक्षिण दिशा तथा ईशानकोण मध्य में हो ऐसी पश्चिम दिशा ब्राह्मण-वर्ग के लिए (यन्त्र लेखन में) उत्तम मानी गई है।

यमे वायौ च पूर्वायामैशान्यां मध्यनैर्ऋतौ।
पश्चिमाग्न्योरुत्तरायां क्षत्रियाणां जयप्रदा ॥ २ ॥

वायुकोण मध्यवाली दक्षिण दिशा, ईशानकोण मध्यवाली पूर्व दिशा, निर्ऋतिकोण मध्यवाली पश्चिम दिशा और अग्निकोण मध्यवाली उत्तर दिशा क्षत्रियों को विजय दिलाने वाली है।

वारुणीशान-याम्या च हुतभुङ्मध्यवायवः।
धनदो नैर्ऋतिश्चैव वैश्यानां धनमानकृत् ॥ ३ ॥

ईशानकोण मध्यवाली पश्चिम, अग्निकोण मध्यवाली दक्षिण, वायुकोण मध्यवाली उत्तर तथा नैर्ऋतिकोण मध्यवाली पूर्वदिशा वैश्यों के धन और मान को बढ़ाने वाली है।

ब्रह्मेशेऽग्नौ पश्चिमायां पलादे मध्यधूर्जटौ।
पूर्वा वायुर्दक्षिणायां शूद्राणां च जयावहा ॥ ४ ॥

अग्निकोण मध्यवाली उत्तर, नैऋर्त्यकोण मध्यवाली पश्चिम, ईशानकोण मध्यवाली पूर्व तथा वायुकोण मध्यवाली दक्षिण दिशा शूद्रवर्ग के लिए विजय देने वाला है।

यह विचार सर्वसामान्य यन्त्रों और उनके कर्मों को ध्यान में रखकर यन्त्र-कल्पों में सूचित किया गया है। कहीं-कहीं विशेष रूप से दिशाओं के बारे में स्वतन्त्र सूचन भी प्राप्त होता है।

मास-विचार—यन्त्र साधना के लिए वैशाख, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पोष, माघ और फाल्गुन मास अच्छे माने गए हैं। इनमें क्रमशः रत्नादि लाभ, इच्छापूर्ति, पुत्रादि सुख, धनप्राप्ति, स्वर्ण लाभ, उन्नति, समृद्धि, बुद्धिवृद्धि एवं धान्यलाभ होते हैं। यहां चैत्र, ज्येष्ठ एव आषाढ़ मास को सामान्यतः उग्रकर्म के लिए उत्तम बताया गया है।

पक्ष-विचार—शुक्ल पक्ष उत्तम तथा कृष्णपक्ष मध्यम होता है।

तिथि-विचार—वशीकरण के लिए नन्दातिथि, लक्ष्मी और बुद्धिप्राप्ति के लिए भद्रातिथि, मुक्ति एवं आध्यात्मिक सिद्धि के लिए जयातिथि, आकर्षण तथा मारणादि प्रयोगों के लिए रिक्ता तिथि और प्रत्येक शुभकार्य के लिए पूर्णातिथि उत्तम मानी गई है।

वार-विचार—ब्राह्मण वर्ग के लिए गुरु और शुक्रवार, क्षत्रियों के लिए रवि और मंगलवार, वैश्यों के लिए सोमवार तथा शूद्रों के लिए बुधवार उत्तम कहा गया है।

नक्षत्र-विचार—हस्त एवं पुष्य नक्षत्र से युक्त रविवार क्षत्रियों के लिए, रोहिणी और मृगशिर से युक्त सोमवार तपस्वियों के लिए, अश्विनी नक्षत्र से युक्त मंगलवार स्वर्णकारों के लिए, अनुराधा नक्षत्र से युक्त बुधवार ब्राह्मणों के लिए, पुष्यनक्षत्र से युक्त गुरुवार वैश्यों के लिए, रेवती नक्षत्र से युक्त शुक्रवार अन्य वर्णों के लिए तथा रोहिणी नक्षत्र से युक्त रविवार दीन-दुखियों के लिए उत्तम माना गया है।

प्रहर-विचार—पूर्वाह्न में वश्य कर्म, मध्याह्न में विद्वेषण, अपराह्न में उच्चाटन, सन्ध्या के समय मारण, मध्यरात्रि में शान्ति और प्रातःकाल में पौष्टिक कर्म करने चाहिएं।

रंग-विचार—मुक्ति एवं आध्यात्मिक साधना के लिए श्वेत, मारण-उच्चाटन के लिए काला, वशीकरण के लिए लाल, लक्ष्मीप्राप्ति के लिए पीला—केसरिया तथा आकर्षण के लिए नीला रंग उत्तम कहा गया है।

इस प्रकार दिशा आदि का ज्ञान करके यन्त्र-साधना करने से सफलता अवश्य प्राप्त होती है। यह कालज्ञान ज्योतिष शास्त्र से सम्बन्धित है। अतः स्वयं को ज्ञान न हो तो ज्योतिषी स पूछकर ज्ञान प्राप्त करे।

१४

यन्त्रलेखन की वस्तुएं और अन्य सावधानियां

१. यन्त्र को किसी न किसी आधार वस्तु या किसी न किसी लेखनवस्तु के द्वारा अंकित किया जाता है। इसमें आधार वस्तु के बारे में पहले विचार किया गया है। अब अन्य वस्तुओं का विचार यहाँ दिया जा रहा।

गन्ध और स्याही

यन्त्र लिखने के लिए शास्त्रों में अष्टगन्ध, पंचगन्ध, यक्षकर्दम, केशर एवं अन्यान्य वस्तुओं का उल्लेख मिलता है।

(क) अष्टगन्ध : पहला प्रकार

(१) अगर, (२) तगर, (३) गोरोचन, (४) कस्तूरी, (५) चन्दन, (६) सिन्दूर, (७) लाल चन्दन, और (८) केशर। इन सबको एक खरल में घोटकर लिखने की स्याही जैसा रस बना लेना चाहिए।

(ख) दूसरा विधान

(१) कपूर, (२) कस्तूरी, (३) केशर, (४) गोरोचन, (५) संगरफ, (६) चन्दन, (७) अगर और (८) गेहूंला का मिश्रण भी अष्टगन्ध कहलाता है।

(ग) तीसरा विधान

(१) केशर, (२) कस्तूरी, (३) कपूर, (४) हिंगलू, (५) चन्दन, (६) लाल चन्दन, (७) अगर तथा (८) तगर। इनका मिश्रण भी अष्टगन्ध कहलाता है।

(घ) चौथा विधान : देवी का अष्टगन्ध

चन्दनागुरुकर्पूर-कुङ्कुमं रोचनं तथा।
शिलारसो जटामांसी कर्पूरं चैकवृद्धितः॥

(१) चन्दन, (२) अगर, (३) हल्दी, (४) कुंकम, (५) गोरोचन, (६) शिलाजीत, (७) जटामांसी और (८) कपूर। इन सबको मिलाने से देवी का अष्टगन्ध बनता है, इसमें क्रमशः प्रत्येक वस्तु का एक एक अंश बढ़ाते हुए तौल से लेना चाहिए। अन्यत्र भी यही सामान्य-नियम समझें।

इसी प्रकार अन्य देवताओं के अष्टगन्धा में भी किसी न किसी वस्तु की न्यूनाधिकता रहती है।

पञ्चगन्ध—(१) केशर, (२) कस्तूरी, (३) कपूर, (४) चन्दन और (५) गोरोचन इन पांच वस्तुओं के मिश्रण से बनता है।

यक्षकर्दम का विधान—(१) चन्दन, (२) केशर, (३) कपूर, (४) अगर, (५) कस्तूरी, (६) गोरोचन, (७) हिंगलू, (८) रतांजनी, (९) अम्बर, (१०) सोने का वर्क तथा (११) मिर्च व (१२) कंकोल इन सबके मिश्रण से तैयार होता है।

गन्धत्रय—(१) सिन्दूर, (२) हल्दी तथा (३) कुंकम से बनता है। इसके अतिरिक्त कर्मभेद से श्मशान की भस्म, श्मशान का कोयला, रक्त (पशु, पक्षी एवं मानव का), दूध (पशु और महिला का), हरताल, भिलावां, नीम आदि के पत्तों का रस, आक और अन्य दूध वाले वृक्ष-पौधों के दूध आदि का भी स्याही के रूप में प्रयोग होता है।

उपर्युक्त वस्तुओं में से जैसी वस्तु लेने का विधान हो, उसे एक पवित्र कटोरी अथवा स्वच्छ पात्र में रख ले। जहां तक हो, पात्र ऐसा होना चाहिए कि जिसमें भोजन न किया गया हो, इस दृष्टि से नया पात्र लेना ही उचित है। जहां तक सम्भव हो गन्ध में पानी के स्थान पर गंगाजल, गुलाब जल, इत्र अथवा अन्य ऐसी ही अच्छी वस्तु का प्रयोग करें।

लेखिनी—प्रत्येक यन्त्र लेखन में लेखिनी की आवश्यकता होती है। यह लेखिनी मुख्य रूप से अनार अथवा चमेली की ग्रहण की जाती है। वैसे स्वर्ण, रजत, ताम्र, लोह एवं अन्य धातुओं से बनी शलाकाओं से भी यन्त्र लिखे जाते हैं। इसमें भी कर्मभेद से नीम, आम, आक, पक्षियों के पंख, वृक्षों के कांटे आदि का उपयोग होता है। जिनका विशेष उल्लेख यन्त्र के साथ होता है।

कुछ सावधानियां

लिखते समय कलम का टूटना अथवा गन्ध का कम हो जाना अपशकुन रूप होता है अतः पूरी सावधानी रखनी चाहिए।

आजकल होल्डर और पेन आदि का प्रचलन बहुत हो गया है अतः इनका प्रयोग करें तो नए सोने के बने हुए निब का प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु कील, बालपेन, पेन्सिल, स्पोट पेन आदि का उपयोग ठीक नहीं होता। पेन में डालने के लिए स्थायी स्याही (पेन इंक) घर पर ही ऊपर लिखी पद्धति से बनानी चाहिए। बाजार की स्याही न लें। भोजपत्र, कागज, वृक्ष के पत्ते, धातु से बने पतरे, स्फटिक तथा शालिग्राम शिला एवं मणि आदि सभी वस्तुएं स्वच्छ हों, कीटादि-विद्ध अथवा खण्डित न हों। यह स्मरण रखना भी आवश्यक है। शुद्धता और पवित्रता सिद्धि का पहला सोपान है।

यन्त्र किसी अन्य कारीगर से खुदवाना हो तो आधार वस्तु पर पहले शुभ मुहूर्त में उपर्युक्त वस्तुओं से रेखांकन कर लें। बाद में यथासमय कारीगर के औजार को स्वच्छ जल से धोकर गन्धाक्षत करें, कारीगर के मस्तक पर तिलक करके उसे कुछ दक्षिणा एवं खाद्य वस्तु—प्रसाद दे दें फिर यंत्र उत्कीर्ण करवाएं।

यंत्र लिखने के लिए जब बैठें तो यंत्र के साथ लिखे हुए विधान का पूर्णरूप से पालन करें। इनके अतिरिक्त निम्नलिखित बातों का भी ध्यान रखें—

(१) लिखते समय मौन रहें अथवा इष्टमंत्र अथवा यंत्र सम्बन्धी मंत्र का भक्तिपूर्वक स्मरण करें।

(२) सुखासन से बैठें; किन्तु कर्मभेद से अन्य आसनों का उपयोग भी किया जा सकता है।

(३) अपने सामने चौकी, बाजोठ या पट्टा रखकर उस पर आधार वस्तु रखकर लिखें। अपने घुटने पर रखकर लिखना निषिद्ध है, क्योंकि नाभि से नीचे का अंग ऐसे कार्यों में अनुपयोगी है।

(४) यंत्र लिखने के समय धूप-दीप अवश्य रखना चाहिए।

(५) यंत्र-लेखन से पूर्व अपना दैनिक नित्य कर्म सन्ध्या-पूजा आदि पूर्ण कर लेना चाहिए।

(६) दिशा, प्रहर, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, चन्द्रबल एवं शुभ पर्व तथा शुभ दिन का ज्ञान कर लें।

(७) पहनने के वस्त्र शुद्ध और स्वच्छ हों। धोबी के यहां से धुले हुए, नील लगे हुए और फटे-पुराने सिले हुए न हों। जहां तक सम्भव हो रेशमी अथवा ऊनी धोती और दुपट्टा ही धारण करें।

(८) लिखते समय मन में अशुभ विचार न लाएं, अपितु मेरा यह कार्य सिद्ध होगा, प्रभु कृपा करेंगे, ऐसी भावना करें।

(९) अनुचित कार्य की सिद्धि के लिए प्रयास न करें।

(१०) मारण-उच्चाटण जैसे कर्मों से सदा बचते रहें। ऐसे कर्मों के लिए की जाने वाली क्रिया का परिणाम कर्ता को भी भोगना पड़ता है।

(११) इसी प्रकार आसन, स्थान एवं अन्य साधनों के उपयुक्त निर्देशों का भी पालन आवश्यक है।

(१२) यंत्र को जमीन पर न रखें। श्रद्धा बनाए रखें। यंत्र को सदा देवस्वरूप समझकर उसका बहुमान करें।

(१३) मंत्र धारण में अथवा पूजा आदि में लोकाचारवश सूतक-मृतकादि का प्रसंग आ जाए तो उसे पुनः धूप देकर मंत्र-जप करके शुद्ध कर लें।

पांचवें हिस्से (लिखित संख्या) का होम कर दिया जाता है तो कहीं अन्यान्य वस्तुओं को न्यूनाधिक रूप से मिलाया जाता है।

हवन करने की विधि—

सामान्यतः विशिष्ट प्रयोग के—पुरश्चरण के पूर्ण होने पर उसका दशांश हवन करना अत्यन्त आवश्यक माना गया है। इसकी विधि कर्मकाण्ड के ग्रन्थों में लिखी रहती है। किसी उत्तम कर्मकांडी ब्राह्मण के निर्देशन में यह कार्य किया जाए तो अच्छा रहता है। यदि वैसा सुयोग न हो तो गणपति, नवग्रह षोडशमातृका एवं रुद्रकलश की स्थापना करके विधिवत् पूजन करें। इस स्थापना के सामने २४ अंगुल की एक स्थण्डिल-यज्ञ वेदी बनाएं। उस पर गोमय लीप कर पृथ्वीपूजन करके अग्निस्थापन करें। पीपल, आम, बरगद आदि हवन के योग्य पवित्र वृक्ष की लकड़ी एवं गाय के गोबर के उपले का समिधा के रूप में प्रयोग कर जौ, तिल, चावल, घृत और चीनी मिला कर शाकल्य बनाएं और उससे आवाहित देवता एवं प्रधान देवता का हवन करें।[1]

तर्पण, मार्जन और ब्राह्मणादि भोजन

हवन के पश्चात् दशांश तर्पण,[2] दशांश मार्जन[3] और दशांश ब्राह्मण भोजन कराएं।

देवी से सम्बद्ध यन्त्र-मन्त्र का प्रयोग होने पर छोटे बालक और कुंवारी कन्या तथा सौभाग्यवती स्त्री को भोजन कराना विशेष लाभप्रद है।

---

१. जिस यन्त्र के प्रयोग के साथ किसी विशेष वस्तु के हवन का विधान लिखा हो, वहां उसी वस्तु का प्रयोग आवश्यक है।

२-३. तर्पण और मार्जन की विधि के लिए कर्मकाण्ड के ग्रन्थों से ज्ञान प्राप्त करें।

१६

यन्त्रों के शास्त्रीय स्वरूप-विवेचक ग्रन्थ

संस्कृत साहित्य में विश्व के सभी आवश्यक विषयों पर लिखा गया है। जो विषय नए-नए उत्पन्न होते हैं उनका मूल इसमें अवश्य मिलता ही है। अतः यह कहा जाता है कि 'यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्'। अर्थात् जो यहां है वही अन्यत्र है तथा जो यहाँ नहीं है वह कहीं नहीं है। इस दृष्टि से हमारा विद्वत्समाज सदा जागरूक रहता है और नए-नए विषयों को संस्कृत-भाषा में संकलित करता रहता है।

मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र, योग और स्वर जैसे विषयों का मूल आगमों में वर्णित है। निगम—वेद और आगम एक-दूसरे के पूरक हैं। जिन बातों को वेदों ने सूत्र-रूप में वर्णित किया है उन्हें आगमों ने प्रयोगात्मक रूप देकर विस्तार से अभिव्यक्त किया है। यन्त्रों के शास्त्रीय स्वरूप का विवेचन करने के लिए प्राचीन ग्रन्थों में "वामकेश्वर-तन्त्र, ताण्डवतन्त्र, बृहद्यन्त्र-चिन्तामणि, यन्त्र-चिन्तामणि, यन्त्रमहोदधि, यन्त्रमहार्णव, महाकालसंहिता, आर्षविद्यानुशासन, सिंहसिद्धान्तसिन्धु आदि बहुत से ग्रन्थ हैं। इनमें यन्त्र-विद्या के बारे में उल्लेख करने के साथ ही यन्त्रोपासना के विधान भी स्पष्टरूप से व्यक्त किये गये हैं।

इनके अतिरिक्त श्रीयन्त्र से सम्बन्धित 'ज्ञानार्णव' आदि ग्रन्थों में यन्त्र लिखने की प्रक्रिया पर भी विस्तार से विचार किया गया है। इसी प्रकार अन्य धर्मों में जैन और बौद्ध यन्त्रों के प्रतिपादक ग्रन्थ भी पर्याप्त लिखे गये हैं। ऐसे बहुत से ग्रन्थ लुप्त भी हो गए हैं जिनका उल्लेख प्राचीन टीकाकारों ने किया है। 'बृहज्ज्योतिषार्णव' में भी कुछ यन्त्र-मन्त्रों का संग्रह है।

योगशास्त्र में शारीरिक चक्रों का वर्णन भी यन्त्र-विद्या का पूरक ही है। वहां शरीर के मूलाधार से सहस्रार तक जो चक्र हैं, वे यन्त्र रूप ही हैं। साथ ही उनके जो सूक्ष्म-चक्र हैं वे अति प्रसिद्ध न होने पर स्थूल चक्रों में विराजमान

देवताओं के अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता की सूक्ष्म स्थिति के सूचक यन्त्र हैं शास्त्रों में वर्णित हैं। इतना ही नहीं, जो षट्चक्र शरीर के प्रमुख स्थानों में हैं वे हाथों की हथेली और पैरों की तलियों में भी विभक्त हैं, जो यन्त्र-रूप ही हैं। अतः 'योगतारावली' आदि शरीरचक्रविवेचक ग्रन्थ भी यन्त्र-विद्या के पूरक हैं।

यज्ञों में विभिन्न आकृतियों के कुण्डों की रचना की जाती है। ये कुण्ड चतुरस्र, त्रिकोण, अष्टकोण, पद्म, चाप तथा नवग्रहों के चिन्हों की आकृतियों के बनते हैं, ये भी यन्त्ररूप ही हैं। इनका वर्णन कर्म-काण्ड के ग्रन्थों में प्राप्त होता है।

वर्णमातृका के यन्त्रों का स्वरूप 'वर्णोद्धारयन्त्र' में किया गया है। इन्हीं के आधार पर बीज-मन्त्रों को भी यन्त्र के रूप में मानकर उनमें अंक लिखने का संकेत मिलता है। वर्णों के समूह से निर्मित कूट भी यन्त्र पद्धति से लिखे हुए प्राचीन ग्रन्थों में हमें उपलब्ध होते हैं। 'महाकाल-संहिता' में ऐसे कूटात्मक यन्त्रों का वर्णन है।

तन्त्रशास्त्रों के ग्रन्थ वैदिक परम्परा के पूरक होने के कारण प्रतीक रूप से ही निर्मित हैं। अतः वेदों में, आरण्यकों में, उपनिषदों में और मन्त्र-यन्त्रात्मक स्तोत्रों में गुप्तरूप से ही यन्त्र वर्णित किए जाते हैं। अतः गुरुकृपा से ही ये प्राप्त होते हैं। 'नैषधीयचरित महाकाव्य' के कर्ता श्रीहर्ष कवि को 'चिन्तामणि मन्त्र' प्राप्त था। उसी के बल पर वह महाकवि तथा अनेक शास्त्रों का मर्मज्ञ बना था। फलतः उसने प्रस्तुत काव्य में महाराजा नल को भगवती शारदा के द्वारा उक्त मन्त्र का उपदेश करवाया है। उससे सम्बन्धित पद्य में ही यन्त्र का विधान भी संकेत रूप से दिखाया है। यथा—

अवामावामार्धे सकलमुभयाकारघटनाद्,
द्विधाभूतं रूपं स्मरहरमयं सेन्दुममलम्।

इत्यादि पंक्तियों में जहाँ मन्त्र छिपा हुआ है वहीं आवामा—सीधी रेखा, वामार्धे—अर्धभागों में दो तिरछी रेखाएं—इन दोनों के मिलने से बने हुए त्रिकोण का द्विधाभूत रूप—षट्कोण, इस प्रकार यन्त्र बनाने का भी संकेत है।

इस पद्धति के अनुसार प्रायः सभी तन्त्र ग्रन्थों में जिनकी विस्तृत सूची हमने इससे पूर्व तन्त्रशक्ति नामक ग्रन्थ में दी है, संकेत दिये गये हैं। बृहद्-यन्त्रचिन्तामणि, यन्त्रचिन्तामणि, यन्त्ररत्नावली, शाक्तप्रमोद, प्रपञ्चसारतन्त्र, वामकेश्वरतन्त्र, ज्ञानार्णवतन्त्र आदि ग्रन्थों में विस्तार से यह विषय समझाया गया है।

जो केवल यन्त्र के ग्रन्थ हैं उनमें वश्य, आकर्षण, स्तम्भन, विद्वेषण, मारण, उच्चाटन, शान्ति तथा मोक्ष नामक कर्मों को आधार बनाकर स्वतन्त्र रूप से संकलन हुआ है। उपनिषदों में शाक्त, शैव, वैष्णव आदि सम्प्रदायों की दृष्टि से विभिन्न उपासना-पद्धतियों के वर्णनों के साथ-साथ यन्त्रों का भी वर्णन किया गया है। जैसे शाक्त उपनिषद्—१. त्रिपुरोपनिषद्, २. त्रिपुरातापिन्युपनिषद, ३. देव्युपनिषद्, ४. बह्वृचोपनिषद्, ५. भावनोपनिषद्, ६. सरस्वती रहस्योपनिषद्, ७. सीतोपनिषद्, ८. सौभाग्य और ९. लक्ष्म्युपनिषद् का संग्रह है और इनमें संकेत रूप से यंत्र एवं मंत्रादि का विधान दिया गया है। टीकाकार श्री उपनिषद् ब्रह्मयोगी एवं भास्कर राय आदि ने अपनी टीकाओं में इस विषय को स्पष्टता से समझाने का प्रयत्न किया है।

'वरिवस्या रहस्य' में श्रीयन्त्र के सूक्ष्म रहस्य को समझाने का अच्छा प्रयास हुआ है। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत सूक्तों को उत्तरकाल में स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत कर आचार्यों ने उन पर टीकाएं लिखीं और उनकी यन्त्रात्मकता को सिद्ध किया। श्रीसूक्त की प्रत्येक ऋचा के यंत्र तथा उनका साङ्गोपाङ्ग विवेचन लक्ष्मीबीजतंत्रकोष में वर्णित है। इन्हीं सूक्तों को आधार मानकर अन्य आचार्यों ने वैसे ही स्तुति साहित्य की रचना की। परिणाम यह हुआ कि यंत्रमंत्रादि प्रक्रिया का निर्देश करने वाली अनेक स्तुतियां भी हमारे यहां निर्मित हुईं।

तान्त्रिक ग्रंथों में साधना के अंगों में पटल, हृदय, कवच, स्तोत्र, सहस्रनाम, आदि को अत्यावश्यक अंग माना गया है। यही कारण है कि उनकी पूर्ति के लिये बने हुए स्तोत्रादि में यंत्रों का विवेचन भी कर दिया गया है। 'शारदा-तिलक' में भिन्न-भिन्न देवों की साधनाओं का जो विधान दिया है, उनके साथ ही यंत्रों का भी विशिष्ट वर्णन हुआ है।

तन्त्रशास्त्र की यह परम्परा रही है कि वे तांत्रिक पद्धतियों को सांकेतिक रूप में ही सूचित करते हैं जिससे उनकी गोपनीयता यथावत् बनी रहे। कई से ग्रंथों में तो स्पष्ट रूप से निषेध कर दिया है कि इसका प्रकाशन न करें तथापि कृपालु आचार्य विधान-लुप्त न हो जाए इस भय से किसी-न-किसी रूप में अवश्य ही लिखते रहे हैं। इसके साथ ही कुछ-न-कुछ अंश गुरुवर्ग से जानने का आदेश भी करते हैं।

आद्य शंकराचार्य ने **प्रपञ्चसारतन्त्र** में मंत्रादि वर्णन के साथ-साथ यंत्रों का भी निर्देश किया है। **मेरुतन्त्र, विश्वसारतन्त्र, परातन्त्र, कालिकापुराण, देवीपुराण, यामलग्रन्थ, कल्पग्रन्थ, वडवानलतन्त्र, शाक्तप्रमोद, कुब्जिकातन्त्र, कुलालिकाम्नाय तन्त्र, गुह्य तन्त्र, भैरवीतन्त्र, चिदम्बरातन्त्र, फेत्कारिणीतन्त्र, वामदेवसंहिता, वशिष्ठसंहिता, विश्वामित्रसंहिता, शक्तिसङ्गमतन्त्र, श्रीविद्यार्णव** आदि अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें देव एवं देवियों के भिन्न-भिन्न रूपों को लक्ष्य में रखकर उनकी साधना-विधि बताते हुए वहीं यंत्रोद्धार तथा उनके आवरण-पूजा का विस्तार से वर्णन किया गया है। यंत्रशास्त्र अति विस्तृत है। इसका यत्किंचित् ज्ञान उपर्युक्त ग्रंथों से हो सकता है। इसी प्रकार शैव, वैष्णव, गाणपत्य, सौर और शाक्त इनके आचार-भेद से भी यंत्रों के अनेक विधान प्राप्त होते हैं।

यद्यपि आगम तथा तंत्रग्रन्थों में मिश्रित रूप से ही यंत्रों के उद्धार-दर्शक पद्यों का उल्लेख मिलता है तथापि कतिपय आचार्यों ने स्वतंत्र रूप से कुछ और भी ग्रन्थों का निर्माण किया है। जिनमें ये ग्रन्थ प्रमुख हैं—

१-यन्त्रकल्प, २-यन्त्रराजागमशास्त्र (श्यामाचार्य रचित) **३-यन्त्रपूजा-प्रकार, ४-यन्त्रप्रकार, ५-यन्त्रप्रतिष्ठाविधि, ६-यन्त्रभेद, ७-यन्त्रलेखनप्रकार, ८-यन्त्रविधान, ९-यन्त्रशोधन विधि, १० यन्त्रसंस्कार पद्धति** (कामेश्वर-तन्त्रान्तर्गत), **११-यन्त्रसंस्कार, १२-यन्त्रसार** (३८०० श्लोकात्म, वैदिक एवं तान्त्रिक यन्त्रों की निर्माण विधि सहित). **१३-यन्त्रावली; १४ यन्त्रोद्धार-पटल** (सुदर्शन संहितान्तर्गत) आदि।

१७

यन्त्रात्मक विशिष्ट स्तोत्र

भारतीय स्तोत्र-साहित्य वेदों के समान ही अति प्राचीन काल से चला आया है। जिस प्रकार वेद सब विद्याओं के निधान हैं उसी प्रकार स्तोत्र भी सभी विद्याओं की खान हैं। मानवीय ज्ञान की तीव्रता जैसे-जैसे कम होती गई वैसे ही पूर्व महर्षियों ने लोक कल्याण के लिए वेदों का व्याख्यान आरम्भ किया। संहिताएं, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् और तन्त्रशास्त्र तक यह प्रक्रिया चली। तन्त्रों को कहीं-कहीं तो वेदों से भी पूर्ववर्ती कहने का साहस किया गया है, तथापि इतना अवश्य है कि तन्त्र वेदस्वरूप ही हैं। इन्हीं तन्त्रों में जैसे वेदों में अग्नि, वरुण, यमादि की अनेक स्तुतियां हैं उसी प्रकार अनेक देवी-देवताओं की स्तुतियां हुई हैं। ये स्तुतियां स्वयं देवताओं द्वारा, महर्षियों द्वारा तथा आचार्य और भक्तों द्वारा विपुल परिमाण में की गई हैं जिनमें सभी प्रकार के साहित्य का निखरा हुआ रूप दृष्टिगत होता है।

१. **सौंदर्य-लहरी**—भगवान् आद्य शंकराचार्य द्वारा निर्मित 'सौंदर्य-लहरी' ग्रन्थ यन्त्रों की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण स्तोत्र है। इसकी यह विशेषता है कि इसके प्रत्येक पद्य से यंत्र, मंत्र, तंत्र और योग के निर्देश प्राप्त होते हैं तथा उनसे अनेक प्रकार के सिद्ध प्रयोग भी किए जाते हैं। पूर्वाचार्यों ने इस पर प्राय: चालीस टीकाएं लिख कर इस स्तोत्र की महिमा को प्रदर्शित किया है। श्रीलक्ष्मीधराचार्य तथा बाबा श्री मोतीलाल जी महाराज ने इसके यंत्रों का विवेचन दिया है। इसी प्रकार अंग्रेजी में भी यंत्रमूलक एक विवेचन प्राप्त होता है। सौन्दर्यलहरी श्रीविद्या का एक प्रमुख स्तोत्रात्मक शास्त्र है। एक अन्य आचार्य ने अपनी टीका में इसके प्रत्येक पद्य से निकलने वाले बीजमंत्रों—

कूटबीजों का उद्धार भी किया है (यह टीका अभी अप्रकाशित है)। हम यहां पाठकों की जानकारी के लिए ऐसे यंत्रों से मिलने वाले फलों की सूची दे रहे हैं—

१. सत्कामनापूर्ति
२. कालभयनिवारण
३. दारिद्र्यनिवारण
४. संकट से रक्षा
५. मोहन
६. विजयप्राप्ति
७. सर्वसिद्धिप्राप्ति
८. सर्वकामनापूर्ति
९. सिद्धिप्राप्ति
१०. कल्याणप्राप्ति
११. भक्तिप्राप्ति
१२. इष्टदर्शन
१३. वशीकरण
१४. सर्वसिद्धिप्राप्ति
१५. विद्याप्राप्ति
१६. कवित्व-सिद्धि
१७. सर्वज्ञान-प्राप्ति
१८. वशीकरण
१९. सर्वलोकवशीकरण
२०. रोगनिवारण
२१. आत्मसाक्षात्कार
२२. मुक्तिप्राप्ति
२३. आकर्षण
२४. सन्तान-प्राप्ति
२५. सर्वकामना-सिद्धि
२६. साक्षात्कार
२७. सर्वकामना-सिद्धि
२८. मृत्युञ्जय
२९. विजय प्राप्ति
३०. सर्वापत्ति-निवारण
३१. सर्वकामना-सिद्धि
३२. कल्याण-प्राप्ति
३३. सर्वकाम-सिद्धि
३४. आत्मसाक्षात्कार
३५. इष्टसिद्धि
३६. भीतिनिवारण
३७. आत्मसाक्षात्कार
३८. ज्ञानप्राप्ति
३९. भीतिनिवारण
४०. अज्ञान-निवारण
४१. सन्तान-प्राप्ति
४२. समृद्धि-प्राप्ति
४३. मोहनिवारण
४४. कल्याण-प्राप्ति
४५. मोहन
४६. ज्ञान-कामनापूर्ति

४७. भीतिनिवारण
४८. सौभाग्यवर्द्धन
४९. सर्वकल्याणप्राप्ति
५०. विद्वेषण
५१. इष्टसिद्धि
५२. मोहन
५३. ज्ञान-प्राप्ति
५४. पाप-मोचन
५५. सुरक्षाप्राप्ति
५६. विजयप्राप्ति
५७. संकटनिवारण
५८. आकर्षण
५९. विजयप्राप्ति
६०. कवित्वसिद्धि
६१. ऐश्वर्यप्राप्ति
६२. सौभाग्यवर्धन
६३. दुःखनिवारण
६४. वाक्सिद्धि
६५. विजयप्राप्ति
६६. कवित्व-सिद्धि
६७. ऐश्वर्यप्राप्ति
६८. लक्ष्मीसिद्धि
६९. संगीतसिद्धि
७०. संकटनिवारण
७१. सौभाग्यवृद्धि
७२. वैभवप्राप्ति
७३. लक्ष्मीसिद्धि
७४. कीर्ति-प्राप्ति
७५. कवित्व प्राप्ति
७६. भीतिनिवारण
७७. संकटनिवारण
७८. इष्टसिद्धि
७९. मंगल की प्राप्ति
८०. स्तम्भन
८१. आकर्षण
८२. विजयप्राप्ति
८३. विजयप्राप्ति
८४. इष्टसिद्धि
८५. सौभाग्यवर्द्धन
८६. विजयप्राप्ति
८७. लक्ष्मीसिद्धि
८८. इष्टसिद्धि
८९. दारिद्रयनिवारण
९०. दारिद्रयनिवारण
९१. संगीतसिद्धि
९२. इष्टसिद्धि
९३. कल्याणसिद्धि
९४. विजयप्राप्ति
९५. अभावपूर्ति
९६. उच्चाटन
९७. इष्टसिद्धि
९८. आत्मसाक्षात्कार
९९. आत्मबोध
१००. सरस्वतीसिद्धि
१०१. सर्वकामना-सिद्धि
आदि

इन फलों की प्राप्ति के लिए 'सौंदर्य लहरी' के व्याख्याकार पूज्य बाबा श्री मोतीलाल जी महाराज ने चार प्रकार की यंत्राकृतियाँ स्वीकृत की हैं। जिनमें १. त्रिकोण—प्रत्येक कोण पर त्रिशूल के आकार वाले। २. त्रिकोण—जिनकी अधोरेखा अर्धचन्द्राकार जैसी कुछ गोलाई से युक्त है, ३. अर्धचन्द्र—जिनकी ऊपर की गोलाई कुछ अधिक है तथा ४. चतुरस्त्र—जिनके कोणों पर त्रिशूल के आकार भी हैं। हां, इतना अवश्य है कि प्रत्येक में लिखे गये बीज पृथक्-पृथक् हैं और उनके लेखन-स्थानों में भी विभिन्नता हैं।

इसी सौंदर्यलहरी के पद्यों के बीजाक्षर और यंत्रों के रूप भी लक्ष्मीधर-कृत टीकावाले ग्रंथ में देते हुए सम्पादक ने लिखा है कि 'केरली और अंग्रेजी भाषाओं में प्रचलित यंत्रों के बारे में मुद्रित यंत्रों का परिचय संस्कृत में दिया है।

इन यंत्रों का स्रोत क्या है ? यह ठीक तरह से ज्ञात नहीं हो पाया है। सम्भवतः यह वृद्ध सम्प्रदाय के आधार पर ही संगृहीत हैं। 'सौंदर्य-लहरी' का एक संस्करण अभी-अभी प्रकाशित हुआ है, उसमें आठ टीकाएं प्रकाशित हैं जिनके अन्त में ये यंत्र भी प्रकाशित हैं और साथ ही प्रत्येक यंत्र के साथ ही उतने ही भगवती के चित्र भी दिए हैं। अतः उनसे ज्ञात होता है कि प्रत्येक श्लोक के आधार पर जो-जो यंत्र बनते हैं उनके अलग-अलग ध्यान भी हैं। इन यंत्रों में और पूर्व दर्शित यंत्रों में बहुधा समानता है। कहीं-कहीं फल तथा कर्म में अन्तर अवश्य है। ऐसे यंत्रात्मक स्तोत्रों में 'सौंदर्य-लहरी' का स्थान सर्वोच्च है।

कर्पूरस्तवराज, धर्माचार्य-विरचित पञ्चस्तवी, विश्वामित्र कल्पोक्त गायत्री-स्तवराज आदि ऐसे अन्य अनेक स्तोत्र हैं जिनमें प्रकीर्ण रूप में यन्त्रों का निर्देश हुआ है। गणपति, भैरव, दुर्गा, गोपाल, हनुमान एवं अन्य देव-देवियों के स्तोत्र भी पर्याप्त प्रकाशित हैं।

यंत्र और मंत्र सम्बन्धी विशिष्ट ज्ञान के लिए हमें टीकाकारों का आभार मानना चाहिए, क्योंकि यदि कृपालु टीकाकार स्तोत्र के रहस्य का उद्घाटन नहीं

करते तो हम उसकी महिमा से कैसे परिचित होते। कई स्तोत्र तो ऐसे भी हैं जो स्वयं यंत्ररूप में लिखे जाते हैं तथा उनकी साधना की जाती है।

यहां यह भी स्मरणीय है कि जितने भी 'कवच' रूप स्तोत्र हैं उन सबको ग्रहण- विशिष्ट पर्व एवं निर्दिष्ट दिनों में लिखकर उनको धारण करने का विधान उनकी फलश्रुति में अंकित रहता है। अतः वे यद्यपि यन्त्र के समान आकृति-मूलक तो नहीं होते हैं किन्तु वे धारणयन्त्र की कोटि में अवश्य आते हैं।

भगवन्नाम, मन्त्र, स्तोत्र, कवच आदि को कुछ लोग इष्टदेव की आकृति में चित्ररूप से अंकित करते हुए भी देखे गये हैं। शिवलिंग, दुर्गा, राम, कृष्ण और हनुमान आदि के ऐसे चित्र बहुधा लिखे हुए तथा छपे हुए प्राप्त होते हैं। अतः यह सहज ही कहा जा सकता है कि हमारा यंत्र-साहित्य शास्त्रीय ग्रंथों के समान ही स्तोत्र-साहित्य में भी पर्याप्त फैला हुआ है।

जैन सम्प्रदाय में यन्त्र-साहित्य

सनातन धर्मावलम्बियों के समान ही जैन धर्मावलम्बियों में भी यंत्रों के विवेचक शास्त्र तथा स्तोत्रादि बहुत ही अधिक संख्या में प्राप्त होते हैं। 'कोठ्ठग चिन्तामणि' की चर्चा हम पहले कर चुके हैं जो अंकयंत्रों के स्वरूप एवं प्रकारों का एक अच्छा प्रामाणिक ग्रंथ है। नवपदयंत्र, नमस्कार-मंत्र-यंत्र, सिद्धचक्र, ऋषिमण्डलयंत्र उवसग्गहरयंत्र, पद्मावती-यंत्रादि के बारे में विश्लेषण करने वाले अनेक ग्रंथ भी प्राप्त होते हैं। इनके साथ ही इन उपास्य देव-देवियों के पृथक्-पृथक् स्तोत्रादि भी बनाये गये हैं। वर्धमान-विद्यायंत्र और विजय-पताका-यंत्र जैसे विशाल यंत्रों को किसी वस्त्र पर लिखकर रखने की परम्परा भी जैन सम्प्रदाय में अति प्राचीन काल से चली आई है। उदाहरणार्थ यहां कुछ यंत्रों का परिचय दिया जा रहा है।

१. नवपद यन्त्र—पूजन यंत्रों में इस यंत्र का स्थान सर्वप्रथम है। इसकी रचना में सर्वप्रथम मध्य में वर्तुल, उस पर अष्टदल-कमल तथा उस पर

तीन वृत्तों का आलेखन होता है। मध्य वर्तुल में अरिहन्त की सिंहासनस्थ श्वेतमूर्ति होती है। कमल के दिशा वाले चार पत्रों में सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु होते हैं। जिन का रंग क्रमशः लाल, पीला, नीला और काला होता है। विदिशा के दलों में पीत वर्ण पर ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप से सम्बद्ध मन्त्र लाल वर्ण से लिखे जाते हैं। तदनन्तर तीन वलयों को क्रमशः पीत, रक्त एवं नीले वर्ण से लिखते हैं। इस तरह इसमें पंच परमेष्ठी के स्वरूप तथा जैन धर्म के चार तत्त्वों के पदों का उल्लेख होता है। यह यंत्र नित्य पूजोपयोगी है तथा इसकी पूजा से मुमुक्षुओं को आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त होता है।

२. **नमस्कार-मन्त्र-यन्त्र**—इस यंत्र के छोटे-बड़े अनेक रूप प्राप्त होते हैं, जिनमें अनेक वलय एवं मंत्रों का उल्लेख होता है। **'पञ्चनमस्कृति दीपक'** नामक ग्रंथ में तथा **'नमस्कार-स्वाध्याय'**[1] ग्रंथ में इसका विस्तृत वर्णन दिया है।

३. **सिद्धचक्र (बृहद्) यन्त्र**—इस यंत्र के स्वरूप के बारे में **'सिद्धचक्रयन्त्रोद्धारविधि'** में **श्रीसिद्धचक्रस्तोत्र** (पद्यात्मक) दिया हुआ है। तथा अन्यत्र संक्षेप में यंत्रस्वरूप इस प्रकार बतलाया है—

जो धुरि सिरि अरिहंत मूल दृढ पीठ पइट्ठिओ,
सिद्ध सूरि उवज्झाय, साहु चिहु पास गरिट्ठओ।
दंसण नाण चरित्त तव हि पडिसाहा सुंदरु,
तत्तक्खर सरवग्ग लद्धिगुरु पयदल दुंबरु॥
दिसिवाल जक्ख जक्खिणी पमुह सुरकुसुमेहि अंकियो।
सो सिद्धचक्क गुरु कप्पतरु अम्ह मनवांछित फल दियो॥

इसके अनुसार मूल पीठ में अरिहंत, अष्टदल में नवपदयंत्र के समान ही सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु दिक्पत्रों में तथा ज्ञान, दर्शन, चरित्र और तप विदिक्पत्रों में रहते हैं। तदनन्तर षोडशदल कमल में तत्त्वाक्षर ह्रीं से युक्त

---

१. जैन साहित्य विकास मण्डल, घोड़बन्दर रोड, विलेपारला बम्बई से प्रकाशित।

सोलह स्वर, तथा इसी के एकान्तरित पत्रों में कवर्गादि आठ वर्गाक्षर तथा इनके अन्तरित दलों में ओंकार सहित सप्ताक्षरी मंत्र 'नमो अरिहताणं' लिखा जाता है। तदनन्तर ४८ लब्धिपद अष्टदल में लिखकर उसके ऊपर 'ह्रीं' तथा नीचे 'क्रों' इन दोनों बीजों द्वारा साढ़े तीन वृत्तों से आवेष्टित करते हैं। इस वेष्टन की परिधि पर आठ गुरुपादुका लिखते हैं। इस प्रकार यहां यंत्र का आन्तरिक भाग होता है। इसी को 'अमृतमण्डल' कहते हैं। इसी भावना से इस अमृत को कलशाकृति में रखने की दृष्टि से दो रेखाओं के वेष्टन से कलशाकृति बनाई जाती है। इस यंत्र की आराधना शान्तिककर्म के लिए होने से यह जल-मण्डल उज्ज्वल वर्ण द्वारा अंकित होता है। कलशाकार का आलेखन अनेक रूपों में प्राप्त होता है, जिसमें नेत्र तथा दुपट्टा प्रमुख हैं। कहीं-कहीं मुकुट भी बनाते हैं। तदनन्तर अधिष्ठायक देवों का विभाग है, जिससे जयादि देवियां दिशाओं में, जम्भादि चार विदिशाओं में, फिर एक वलय, चार दिशाओं में चार द्वारपाल, विदिशाओं में चार वीर, दस दिशाओं में दस दिव्यकाल, नीचे नवग्रह, कलश के कण्ठभाग में नवविधि का लेखन करते हैं। इस प्रकार यह यंत्र बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस यन्त्र का पदस्थ ध्यान और पिण्डस्थ ध्यान यथावत् बना रहे इस दृष्टि से नेत्रादि की व्यवस्था है। कलशाकार की स्थिरता बनी रहे तदर्थ दुपट्टा बांधा जाता है। इसके चारों ओर चार मंदिर भी बनाए जाते हैं। यह यंत्र आत्मा को सिद्ध स्वरूप बनाने में सहायक होता है, ऐसी मान्यता है।

४. **ऋषिमण्डल-यन्त्र**—इस यंत्र के मध्यभाग में पर्वत जैसी रेखाएं है, जो मेरु पर्वत की सूचक हैं। बीच में ह्रींकार की स्थापना है जो यह सूचित करती है कि ह्रींकार मेरुपर्वत पर स्थित है। ह्रींकार कला, बिन्दु और नाद से युक्त है। इसके बाएं भाग में 'ॐ' तथा दाएं भाग में 'नमः' लिखा है। यहां ह्रीं तथा अर्हं को चित्र द्वारा ग्रहण करके ऋषिमण्डल का लघुमंत्र 'ॐ ह्रीं अर्हं नमः' की स्थापना भी मानी जाती है। मध्यभाग के ऊपर ३४ कूटाक्षर हैं जो मेरुपर्वत के शिखरों का स्मरण कराते हैं। तदनन्तर पहले वाक्य में स्वर-व्यंजन

वर्ग सहित आठ प्रकार के पिण्डाक्षर, द्वितीय वलय में नवग्रह, तीसरे वलय में दस दिक्पाल, चौथे वलय में अर्हदादि आठ पद, पांचवें वलय में चतुर्निकाय के चौसठ इन्द्र तथा बारह प्रधान लब्धिधारी १६ कोष्ठकों में स्थापित हैं। छठे वलय में २४ महादेवियां हैं। इनके चारों ओर लवण समुद्र, जो कि जम्बूद्वीप को घेरे हुए है, इसमें अन्तर्द्वीप समूह के परिचायक ५६ 'व' जलबीज के रूप में जलतरंगों में बहते हुए दिखाये जाते हैं। तदनन्तर साढ़े तीन वृत्तों से वेष्टित ऊपर ह्रीं तथा नीचे क्रों बीज हैं। पूरा यंत्र जलतत्त्व प्रधान कलशाकार में अंकित होता है। कलश में नेत्र तथा दुपट्टा धारण कराए हुए हैं। यंत्र के आसपास इसके प्रधान अधिष्ठायक के रूप में धरणेन्द्र और पद्मावती देवी, गणधर गौतम स्वामी, गुरुपादुका तथा साधक मुनि की स्थापना करते हैं। चार कोणों में त्रिशूलाकृति सहित चतुरस्र है। इन प्रकार यह यंत्र तुष्टि-पुष्टि-कारक महाप्रभावशाली माना गया है।

इसी प्रकार सूरिमंत्र-यंत्र का भी विस्तारपूर्वक वर्णन है तथा इसकी साधना आचार्यगण करते हैं। 'अनुभवसिद्धमन्त्रद्वात्रिंशिका' में कई महत्त्वपूर्ण यन्त्रों का विधान बतलाया गया है।

यंत्रात्मक स्तोत्रों की परम्परा भी जैन सम्प्रदाय में सौन्दर्यलहरी की तरह ही बहुत व्यापक है। उसके टीकाकारों ने 'वृद्ध सम्प्रदाय' के नाम से स्तोत्र पद्यों के आधार पर यंत्र एवं उनकी विधि का अच्छा उल्लेख किया गया है। यथा—

कल्याणमन्दिर स्तोत्र—विक्रम की प्रथम अथवा अन्य मान्यतानुसार छठी शती में उत्पन्न वृद्धवादी के शिष्य श्रीसिद्धसेन दिवाकर ने इस स्तोत्र की रचना की है। ४४ पद्यों की यह कृति जैन सम्प्रदाय में अतीव मान्य है। इसमें पार्श्वनाथ की स्तुति है। इस पर विभिन्न १६ आचार्यों ने टीकाएं तथा अन्य ने अनुवाद आदि लिखे हैं। इसके पद्यों के आधार पर वृद्ध सम्प्रदाय के अनुसार यंत्र, मंत्र और उनके विधानों का प्रकाशन 'कुन्थुसागर स्वाध्याय सदन, खुरई' से हुआ है। प्रत्येक पद्य के आधार पर विविध कर्मों की सिद्धि के प्रयोग इसकी विशेषता को परिलक्षित करते हैं।

भक्तामर-स्तोत्र—विक्रम की आठवीं शती में उत्पन्न श्रीमानतुंग सूरि की यह रचना है। इसमें ४३ पद्य हैं जिनमें ऋषभदेव की स्तुति की गई है। यह स्तोत्र भी अनेक टीकाओं, अनुवादों, समस्यापूर्तियों तथा अनुकरणों से समृद्ध एवं यंत्र-मंत्ररूप सम्प्रदाय से पूर्ण प्रसिद्ध है। श्रीहरिभद्रसूरि ने इस पर ४८ यंत्रों की विधि भी लिखी है। श्री ऋषभदेव की शासन-रक्षिका यक्षिणी चक्रेश्वरी तथा यक्ष गोमुख हैं। अतः ऐसी मान्यता है कि भक्तामर स्तोत्र के पद्यों का प्रयोग करते समय चक्रेश्वरी देवी का चित्र सामने रखना चाहिए। स्तोत्र के पद्यों को सुनकर वह देवी प्रसन्न होती है और मनःकामना पूर्ण करती है। इसके ऋद्धिमन्त्र-यन्त्रों की परम्परा लगभग चार-पांच सौ वर्षों से प्रचलित है। इसके यंत्रों की भी तीन परम्पराएं प्रचलित हैं। इसके ४३ यन्त्रों में कई यंत्र नवीनता से पूर्ण हैं जिनमें केन्द्रस्थानों में खड्ग, धनुष, हस्त, चन्द्र और बीजमन्त्रादि भी अंकित हैं। सभी यंत्रों में परिधि के रूप में स्तोत्र के पद्य लिखे जाते हैं।

भत्तिब्भर स्तोत्र—मानतुंग सूरि रचित यह स्तोत्र भी यंत्र और मंत्र साहित्य के विषयों से परिपूर्ण है।

सप्ततिशतजिनपतिसंस्तवन—विक्रम की पन्द्रहवीं शती में 'आनन्दोल्लासन' पद से आरम्भ होने वाला यह स्तव हरिभद्र नामक मुनि ने बनाया है। इसमें १५ पद्य हैं तथा १७० जिनेश्वरों की स्तुति की गई है। इसके ६वें और १०वें पद्य से १७० अंक का सर्वतोभद्र यंत्र बनता है।

पञ्चषष्ठि-यन्त्रगर्भित चतुर्विंशतिजिनस्तोत्र—जयतिलकसूरि के किसी शिष्य द्वारा पेंसठिए यंत्र की रचना-विधि से पूर्ण श्री ऋषभदेवादि २४ तीर्थंकरों की स्तुति में यह स्तोत्र बनाया गया है। इसी नाम की दो और रचनाएं क्रमशः अज्ञात कर्तृक तथा वाचनाचार्य श्री शीलसिंह (कोष्टक चिंतामणि के रचयिता) की भी प्राप्त होती हैं।

चतुर्यन्त्रगर्भित पञ्चषष्टि स्तोत्र—यह विजयलक्ष्मी सूरि की रचना है तथा ११ पद्यों में चार पेंसठिया यंत्रों का वर्णन हुआ है।

महाप्राभाविक पद्मावती स्तोत्र—इसमें ३७ पद्य हैं तथा प्राचीन वृद्ध सम्प्रदाय के अनुसार इसके पद्यों से भी भक्तामरस्तोत्र के समान विभिन्न यन्त्र बनते हैं। यह देवीस्तुति की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है।

आर्षविद्यानुशासन और **"भैरव-पद्मावती कल्प"** में और भी ऐसे स्तोत्र हैं जिनमें यंत्रों के वर्णन किए गए हैं। इसी प्रकार अर्धमागधी में रचित उवसग्गहर, नमोत्थुणं, तिजयपहुत्त' आदि अनेक स्तोत्र हैं जो यन्त्ररचना, उनकी महिमा, लेखनपद्धति, प्रयोग-विधि आदि अनेक बातों का निर्देश करते हैं।

बौद्ध धर्म, मुस्लिम धर्म, ईसाई धर्म आदि सभी धर्मों में इसी प्रकार यन्त्र-निर्माण विधि एव उनके मन्त्र-प्रयोग आदि के विधानों को व्यक्त करने वाले कितने ही ग्रन्थ बने हुए हैं जिन्हें विस्तार भय से यहां नहीं लिखा जा रहा है।

साधकों का अनुभव यही कहता है कि ये सभी ग्रन्थ कितने ही विस्तार से विषय-वस्तु को समझाने वाले हों, किन्तु जब तक स्वयं प्रयत्नपूर्वक उपासना नहीं की जाती तब तक कोई फल प्राप्त नहीं होता। जिस प्रकार कोई रोगी अपने घर पर अच्छी-से-अच्छी दवाइयाँ लाकर रख ले और उन्हें खाए नहीं तो वह उस रोग से कैसे मुक्त हो सकता है? अतः उपासना पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इसी दृष्टि से हम उपासना के महत्त्व का कुछ निर्देश आगे कर रहे हैं।

१८

उपासना का महत्त्व और आवश्यकता

देव-दुर्लभ मानव-जीवन प्राप्त करके उसको सफल बनाना तथा उसमें सुख का अनुभव करना प्रत्येक मानव चाहता है। सुख-प्राप्ति के उपायों की संसार में कोई कमी नहीं है; किन्तु उन सब में उपासना को सबसे उत्तम बतलाया है। उपासना शब्द 'उप' और 'आसना' इन दोनों के योग से बना है। 'उप' उपसर्ग है तथा 'आस्' धातु है। आस् धातु से ल्युट् प्रत्यय और उसको अन् होकर स्त्रीवाचक प्रत्यय होने से 'आसना' बना है। अतः उपासना का अर्थ है—वरिवस्या, पूजा, शुश्रूषा, परिचर्या आदि। अभिप्रायार्थ है—इष्ट देव तक पहुंचना। उपासना एक प्रकार से तपस्या ही है। इसी तपस्या से स्वरूप की अनुभूति होती है। जीव और शिव की एकता के लिए शास्त्रों में तीन साधन बताए गए हैं—१. कर्म, २. उपासना और ३. ज्ञान। ये उत्तम साधन हैं तथा इनमें परम्परा से फल प्राप्त होता है। जैसे शास्त्रों में जिन कर्मों का उपदेश दिया गया है उनको करना चाहिए। शास्त्रविहित कर्म करने से चित्त शुद्धि होती है। चित्तशुद्धि से उपासना में प्रवृत्ति होती है तथा उसमें एकाग्रता एवं ध्यानस्थिति आती है, इन दोनों के द्वारा ज्ञान प्राप्त होता है और उससे परब्रह्म में लीन होकर आनन्दस्वरूप की प्राप्ति होती है।

उपासना दो प्रकार से होती है—१. सकाम और २. निष्काम। शास्त्रों में १. अव्यक्त और २. व्यक्त उपासनायें भी वर्णित हैं। अव्यक्त उपासना का मार्ग कठिन है। अतः व्यक्तोपासना करनी चाहिए। इस उपासना के लिए इष्टदेव के यन्त्र अथवा मूर्ति की पूजा, नाम का जप, गुणानुवाद, कीर्तन और ध्यान का प्रयोग करना चाहिए। यह राजमार्ग है।

नवधा भक्ति, तन्त्रानुसारी साधना एवं लोकभक्ति आदि प्रमुख उपासनाएं हैं। ज्ञानेन्द्रियां—१. नेत्र, २. कान, ३. नासिका, ४. जिह्वा और ५. त्वचा ये स्वभाव से ही बहिर्मुख होती हैं। इन्हें बहिर्मुखता से हटाकर विषय-विषयी भाव से, यन्त्र के माध्यम से अथवा मूर्ति के माध्यम से, ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है।

पुनः उपासना के दो प्रकार हैं—१. बहिरंगोपासना तथा २. अन्तरंगोपासना। बहिरंग उपासना की चार विधियां हैं जिनमें १. सम्पद् विधि, २. आरोप विधि, ३. संवर्ग विधि और ४. अभ्यास विधि का समावेश होता है। इनका विशेष परिचय इस प्रकार है—

१. 'अन्न, प्राण और मन आदि ही ब्रह्म है' इस प्रकार की भावना सम्पद् विधि है।

२. उपास्य के प्रतीक यन्त्र, प्रतिमा आदि पर इष्ट का आरोप करके उपासना करना आरोप विधि है। यन्त्र अथवा प्रतिमा में इष्ट भावना और उनकी पूजा-स्तुति आदि इसके उपाय हैं।

३. कर्मकाण्ड के अनुसार इष्ट को लक्ष्य करके विधिपूर्वक अग्नि में आहुति देना संवर्ग विधि है।

४. शालिग्राम शिला में विष्णु, बाणलिंग में शिव आदि का आरोप कर उनकी देहाकार धारणा करना अभ्यास-विधि है।

अन्तरंगोपासना में तत्त्व का चिन्तन, मनन और निदिध्यासन होता है तथा उसी से धीरे-धीरे इष्ट का साक्षात्कार होता है।

देवता के रूप, गुण एवं कर्मादि का चिन्तन, मनन, मन्त्रजप, यन्त्र के द्वारा उसकी संयोजना, पटल, पद्धति, कवच, सहस्रनाम और स्तोत्र के द्वारा उपासना करना ये उपासना के तत्त्व हैं। इसी को उपासना-तन्त्र कहते हैं।

आगमों में उपासना-तन्त्र की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा गया है कि 'उपासना से शक्ति का विकास होता है।' जब शिव आणवमल के परिग्रह

से संकुचित हो जाता है तो वह माया के बंधन में पड़ता है। माया शिव की शक्तियों को संकुचित करके अपने बन्धन में बांध लेती है। ये बन्धन 'पंचकंचुक' या पांच आवरणों के नाम से प्रसिद्ध हैं।

ईश्वर की पांच शक्तियां प्रधान हैं। वे ही संकुचित होकर जीव को प्राप्त होती हैं। उनके नाम है—**१. सर्वकर्तृत्व, २. सर्वज्ञता, ३. त्रिकालाबाध्यसत्ता, ४. आनन्दरूपता** एवं **५. सर्वभवनसामर्थ्य**। ये जब जीव को प्राप्त होती हैं तो इनका लघुरूप हो जाता है जिससे १. सर्वकर्तृत्व शक्ति का छोटा रूप जीव में **कलाशिक्षा** के रूप में प्रकट होता है जिसके परिणामस्वरूप वह नई-नई वस्तुएं बनाता है और लोगों को आकृष्ट करता है। २. सर्वज्ञता का सूक्ष्मरूप **विद्या** है। इसके द्वारा जीव वैदुष्य प्राप्त कर विविध प्रकार के ज्ञान-विज्ञान से परिचित होता है। ३. त्रिकालाबाध्यसत्ता का लघु रूप **नियतकालिक सत्ता** है। इसके द्वारा जीव अपना अस्तित्व, प्रभाव, ऐश्वर्य आदि को कुछ न कुछ निश्चित काल के लिए प्राप्त करता है, उस पर अपना अधिकार रखता है। ४. आनन्द-रूपता का संकुचित रूप **रागभोगप्राप्ति** है। इसके द्वारा जीव में प्रेम का उदय, विकास और परस्पर अनुराग की प्राप्ति होती है। वह उपलब्ध वस्तुओं का भोग प्राप्त करता है और उसमें आनन्द का यत्किंचित् अनुभव करता है। तथा ५. सर्वभवनसामर्थ्य का संकुचित रूप **अवस्थानुरूप संकोचत्रय** के रूप में प्रकट होता है। इसके द्वारा जीव बाल, युवा, वृद्ध, छोटा-बड़ा, हल्का-भारी, दुर्बल-स्वस्थ आदि अवस्थाओं में घटता-बढ़ता रहता है।

इन लघुरूपों का विकास कर शिवत्व की प्राप्ति करना ही जीव का परम लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति का एकमात्र उपाय 'उपासना' है। उपासना के द्वारा इन पांचों कंचुकों—आवरणों को जीव तोड़ सकता है, अपूर्णता को पूर्ण कर सकता है, आनन्द से परमानन्द प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार शिवत्व की प्राप्ति होने से सभी बन्धन टूट जाते हैं। अतः इसी को मोक्ष कहते हैं।

मूर्तिपूजा के काल से पूर्व हमारे पूर्वज 'यन्त्र' की पूजा एवं तत्सम्बन्धी जप-तप को ही उपासना के रूप में स्वीकार कर निरन्तर आत्मकल्याण की ओर

अग्रसर होते रहते थे। उनकी इस उपासना-प्रवृत्ति से अधिकार एवं प्रयत्न के अनुसार उन्हें सिद्धियां मिलती थीं और वे अपने परम लक्ष्य की प्राप्ति में भी सफल होते थे।

आज इस उपासना-प्रवृत्ति को पुनः जगाने की अत्यन्त आवश्यकता है। व्यर्थ के आडम्बरों में समय न बिताकर शुद्ध-सात्त्विक उपासना द्वारा जीवन को सार्थक बनाना ही आज के युग की मांग है। इसके द्वारा सभी दुःख-दारिद्र्य, रोग-शोक स्वयं दूर होने लगते हैं और आत्मशक्ति का विकास होकर शिवतत्त्व की सिद्धि प्राप्त होती है।

इस उपासना का सम्बन्ध वैदिक, जैन, बौद्ध, मुस्लिम, आदि समस्त धर्मों से बना हुआ है। केवल कहीं-कहीं सामान्य प्रकारों का भेद दिखाई देता है। जो व्यक्ति जिस धर्म का अनुयायी हो वह जहां तक सम्भव हो अपने धर्म से सम्बन्ध रखने वाली उपासना का ही आश्रय ग्रहण करे। इससे उसके मार्ग में कोई विघ्न नहीं आयेंगे और सफलता भी शीघ्र प्राप्त होगी।

गीता में भगवान् ने स्पष्ट कहा है कि—

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।

अर्थात् अपने धर्म में रहते हुए उसी में मर-खप जाना चाहिए। क्योंकि दूसरे का धर्म बड़ा भयकारक है। यदि किसी कारणवश अन्य सम्प्रदाय की उपासना में प्रवृत्ति हो, तो उसमें भी अपने ही इष्टदेव के स्वरूप को मानकर उपासना करनी चाहिए। उपासना-सिद्धि का सबसे बडा मन्त्र श्रद्धा है। श्रद्धा का वास्तविक अर्थ है दोषदर्शन की वृत्ति को उत्पन्न न होने देना। अतः उपासना के समय दोष-ढूंढ़ने और देखने के स्वभाव का सर्वथा त्याग कर दें और यथाशक्ति स्मरण, ध्यान, पाठ-पूजा आदि करें। अवश्य ही कल्याण होगा।

साधक का चरित्र

साधना-प्रवृत्ति वाले व्यक्ति को अपना जीवन निर्मल तथा उज्ज्वल रखना

चाहिये। व्यर्थ के प्रपंच, मिथ्या बोलने का स्वभाव, अधिक बोलने— बातचीत करने में रुचि और चंचलता का साधक को त्याग करना चाहिये। देवता के प्रति श्रद्धा, गुरुजनों के प्रति आदर, माता-पिता एवं वृद्ध जनों की सेवा में प्रवृत्ति, मितभाषण एवं आत्मचिन्तन जैसे गुणों से ही साधना सफल होती है। जिस साधक के लक्षण उत्तम होते हैं उसके यहां लक्ष्मी का निवास होता है। लक्ष्मी का अर्थ है उत्तम लक्षणों में बसने वाली। अतः सुख-सम्पत्ति तथा इष्ट-कृपा के अभिलाषी साधक सदाचार, शील और सद्व्यवहार के प्रति सदा जागरूक रहें।

भगवान् शंकराचार्य ने श्रीविद्या और श्री सूक्त सम्बन्धी उपासना में सफलता-प्राप्ति के लिये साधक के चरित्र का कथन करते हुए कहा है कि—

सुविमल-चरितः स्याद् शुद्धमाल्यानुलेपा-
भरण-वसनदेही मुख्यगन्धोत्तमाङ्गः।
सुविशद-नखदन्तः शुद्धधीर्विष्णुभक्तो,
विमलरुचिशय्यः स्याच्चिरायेन्दिरार्थी॥

अर्थात् लक्ष्मी की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को अपना चरित्र उज्ज्वल रखना चाहिये। देवी महालक्ष्मी की पूजा करते समय देह को शुद्ध—पवित्र बनाकर, निर्मल वस्त्र, आभूषण और पुष्पमाला पहनकर शरीर पर चन्दन का लेप करना चाहिये।

'सौभाग्य लक्ष्मी उपनिषद्' में श्रीसूक्त के पूजन का प्रकार बतलाकर अन्त में कहा गया है कि—

निष्कामानामेव श्रीविद्यासिद्धिर्न कदापि सकामानाम्।

जो निष्काम भक्तजन हैं उन्हीं को श्रीविद्या की सिद्धि मिलती है। जो सकाम हैं उन्हें सिद्धि नहीं मिलती है। अतः सदा निष्कामभाव से साधन करनी चाहिए।

साधक की उच्च भावना

तन्त्रमार्ग में जो उच्चभावना निहित है, वह उसकी क्रिया-पद्धति में भी दिखाई देती है। इसकी पूजा-पद्धति को ध्यान से देखने से पता चलता है कि इष्टदेव की कृपा प्राप्त करने के लिए साधक इष्ट की पूजा-अर्चना करता है। इष्ट की सहायता से उसे सुख-सम्पदा प्राप्त भी होती है। अतः अपने सभी प्रकार के दीनभाव, पामरता, क्रूरता और पराधीनता के भावों का सर्वथा त्याग कर देना चाहिये। जैसे गरीब धनवान् के पास से धन मांगता है, नौकर मालिक के पास से वेतन माँगता है अथवा असहाय व्यक्ति राजा—अधिकारी के समक्ष सहायता माँगता है। ऐसी भावना से भी मुक्त होकर **देवो भूत्वा देवं यजेत्** के अनुसार देवस्वरूप बनकर आत्मविश्वासपूर्वक पूजा करे।

उपसंहार

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर की गई उपासना तथा यन्त्र-साधना पूर्णरूप से सफल होगी। पाठकवृन्द इसका पठन करके सन्मार्ग में प्रवृत्त हों तथा सब प्रकार की सफलता प्राप्त करें, यही शुभ कामना है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग भवेत्॥

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

प्रयोग-विभाग

ॐ

१

सर्वसाधारण यन्त्र-धारण-विधि

सभी प्रकार के यन्त्रों को धारण करने के लिए तन्त्रशास्त्रों में जो विधि कही गई है, वह इस प्रकार है—

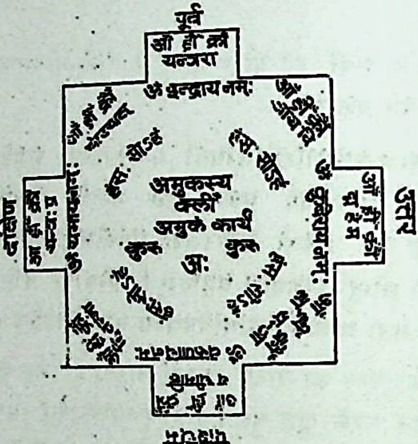
सुस्नातः सुवस्त्र-चन्दनादिभिर्भूषितो यथोक्तद्रव्यैः शुद्धदेशे यन्त्रं लिखेत् । तत्रादौ षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्ये बीजं तदधो द्वितीयान्तं साध्यनाम तत्पार्श्वयोः 'कुरु कुरु' तदधो वियद्युक्तं सर्गबीजं लिखेत् । तत ईशानादि-चतुष्कोणेषु 'हंसः सोऽहं' प्राणबीजं चतुर्दिक्षु दिग्बीजानि प्रतिदिशं यन्त्रगायत्री-वर्णान् लिखेत् । ततः प्राणप्रतिष्ठामन्त्रवर्णैश्च यन्त्रं वेष्टयेत् ।

(जो साधक यन्त्र को धारण करना चाहता हो वह शुभ मुहूर्तवाले दिन प्रातः) शुद्ध स्नान करके, शुद्ध धुले हुए वस्त्र धारण कर मस्तक पर तिलक लगाये तथा 'यन्त्र लिखने के लिये दिखाये गये द्रव्य से' किसी शुद्ध स्थान पर बैठकर यन्त्र लिखे ।

यह यन्त्र चौकोर, दिशाओं के द्वार से युक्त लिखे और इसके बीच में पहले एक लाइन में साधक के नाम के साथ षष्ठी विभक्ति लगा कर लिखे, उसके नीचे 'क्लीं' बीज और उसके नीचे जो कार्य सिद्ध करना हो वह वाक्य द्वितीया विभक्ति लगाकर लिखे । उसके आस-पास 'कुरु-कुरु' लिखे तथा उसके नीचे 'अः' लिखना चाहिए । फिर ईशान आदि चार कोणों में 'हंस सोऽहं' यह 'प्राण बीज' लिखे । पूर्व आदि चारों दिशाओं में उन-उन दिशाओं के बीज अथवा इन्द्र, वरुण, कुबेर और यम के नामों के साथ चतुर्थी विभक्ति सहित 'नमः' पद जोड़ कर लिखे (अथवा इन चारों देवताओं के आयुधों की आकृति बनाए) । इसके

पश्चात् आठों दिशाओं में यन्त्रगायत्री—यन्त्रराजाय विद्महे, महायन्त्राय धीमहि। तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्। (इस मन्त्र) के तीन-तीन अक्षर लिखे। तदनन्तर प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र के अक्षर 'आं ह्रीं क्रों' से यन्त्र को वेष्टित करे। इसके अनुसार लिखे गए यन्त्र का स्वरूप इस प्रकार होगा—

यन्त्र-प्रतिष्ठा-यन्त्र



एवं यन्त्रं लिखित्वा सावधानतया (तस्योपरि स्वेष्टयन्त्रं) सुवर्णादिना वेष्टितं कृत्वा यन्त्रप्रतिष्ठां कुर्यात्। सा यथा—

सर्वतो भद्रमण्डलेऽष्टदले वा कर्णिकायां कलशस्थापनविधिना कलशं संस्थाप्य तदुपरि यन्त्रं स्थापयेत्।

इस प्रकार यन्त्र लिखकर सावधानी से उस पर अपनी इष्ट कार्यसिद्धि के लिए भूर्जपत्रादि पर लिखा हुआ यन्त्र सोना, चांदी, तांबा आदि के बने तावीज में रखकर उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करे।

प्राण-प्रतिष्ठा विधि—सबसे पहले एक श्वेत वस्त्र पर सर्वतोभद्र अथवा अष्टदल कमल का आकार चावलों से बनाए। फिर उसके मध्यभाग में कलश

स्थापन करने की विधि से कलश स्थापित करे। उस कलश पर एक पात्र (छोटी थाली या कटोरी) चावल भर कर रखे और उसमें ऊपर लिखा हुआ यन्त्र खुला हुआ रखकर उसके बीच में (तावीज में रखे हुए) यन्त्र की स्थापना करे।

मण्डलस्य कोणचतुष्टये चतुष्कलशान् संस्थाप्य प्रतिकलशं 'आं ह्रीं क्रौं' इति त्र्यक्षरीं विद्यां कूर्चबीजयुतां सहस्रं जपेत्।

भद्रमण्डल के चारों कोनों पर चार कलश स्थापित कर प्रत्येक पर 'आं ह्रीं क्रौं स्वाहा' इस (त्र्यक्षरी) विद्या का एक सहस्र बार जप करे।

ततस्तद्यन्त्रं चतुष्कलशोदकैरभिषेकमन्त्रैरभिषिच्य गन्धादिभिः सम्पूज्य यन्त्रे प्राण-प्रतिष्ठामन्त्रेण यन्त्रदेवताप्राणान् प्रतिष्ठाप्य यन्त्रगायत्र्या यन्त्रं षोडशोपचारैः सम्पूज्य ब्राह्मणान् सुवासिनीः कुमारीश्च सम्भोज्य दक्षिणां दत्वा तेषामाशिषो गृहीत्वा यथोक्ताङ्गे यन्त्रं बध्नीयात्।

तदनन्तर चारों दिशाओं में स्थापित कलशों के जल के द्वारा अभिषेक के मंत्र बोलते हुए मन्त्र का प्रोक्षण करे। फिर गन्ध आदि से उसकी पूजा करके यन्त्र पर प्राण-प्रतिष्ठा के मन्त्रों से यन्त्रदेवता के प्राणों को आवाहित कर प्रतिष्ठित करे तथा यंत्रगायत्री द्वारा यंत्र की षोडशोपचार से पूजा करके ब्राह्मण, सौभाग्यवती स्त्रियों और कन्याओं को भोजन कराकर दक्षिणा दे तथा उनके आशीर्वाद ग्रहण कर विधि में बताए अनुसार अपने अंग पर यंत्र धारण करे। अभिषेक मंत्र—देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो[1] इत्यादि अथवा आपो हिष्ठा

---

१. पूरे मंत्र इस प्रकार हैं—

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
सरस्वत्यैवाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वासाम्राज्येना-
भिषिञ्चाम्यसौ॥

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
सरस्वत्यैवाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि॥

मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातु नः[1] इत्यादि तीन मंत्र बोलने चाहिएं।

प्राण-प्रतिष्ठा विधि—

हाथ में जल, अक्षत और पुष्प लेकर—

ॐ आद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके भरतखण्डे रामराज्ये आर्यावर्तैकदेशान्तर्गतपुण्यक्षेत्रे[2] शालिवाहनकृते शके···अमुक संवत्सरे···—मासे,···पक्षे···तिथौ वासरे मम···आत्मनः श्रुतिस्मृति-पुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं अमुकयंत्रस्य···ताडनावधातादिदोषपरिहारार्थं अग्न्युत्तारण(धूपोत्तारण)पूर्वकं प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये।[3]

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि ॥
सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामि।
इन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेभिषिञ्चामि ॥

१. ॐ आपो हि ष्ठा मयो भुवस्तान् ऊर्जे दधातु नः।
महेरणाय चक्षसे ॥
ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः। उशतीरिव मातरः।
ॐ तस्मा अरंगमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः ॥

२. यहां खाली छोड़े हुए स्थानों में स्थान, शक वर्ष, मास, पक्ष, तिथि, वार और अपना नाम क्रमशः बोलें।

३. मंत्र और तंत्रशास्त्रों में विभिन्न यंत्रों की प्रतिष्ठा एवं पूजा-पद्धतियों का बड़े विस्तार के साथ विवेचन किया है। प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पूजा-यंत्र की नित्य-पूजा में आवरण-पूजा का विधान है। इसमें यंत्र में आलिखित बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, अष्ट दल एवं भूपूर आदि स्थानों तथा दिशा-विदिशाओं में स्थापित होने वाले देवताओं की पूजा और तर्पण किये जाते हैं। इस सम्बन्ध में दुर्गा-यंत्र की पूजा में विशेष निर्देश करेंगे।

यह सब कार्य समय और सुविधा, निष्ठा और व्यवस्था एवं कर्म सम्बन्धी ज्ञान तथा क्रिया को दृष्टि में रखकर करना चाहिये।

यह बोल कर किसी पात्र में उन्हें छोड़ दें और यदि यंत्र किसी धातु का बना हुआ हो तो उस पर शुद्ध घी लगा दें और कागज पर हो तो उसके सामने घृत की धूप देकर उससे धूपित करे। फिर दूध और जल मिला कर उससे स्नान कराए और इष्ट मंत्र बोलता रहे। फिर विनियोग करे—

ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं अस्मिन् यन्त्रे प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः। इससे जल छोड़ें।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यंत्रस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यंत्रस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य इहैव सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्ताम् ॐ प्रतिष्ठ॥

एष वै प्रतिष्ठा नाम यज्ञो यत्रतेन यज्ञेन यजन्ते। सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति॥ अस्मिन् यन्त्रे यन्त्रदेवता सुप्रतिष्ठिता वरदा भवतु।

फिर गन्ध पुष्पादि पञ्चोपचार से पूजन करे और यंत्र के षोडश संस्कारों की सिद्धि के लिए १६ बार इष्ट-मंत्र का जप करे। फिर—

अस्य यंत्रस्य षोडशसंस्काराः सम्पद्यन्ताम्।

इतना बोल कर प्रणाम करे। फिर यंत्र पूजन का हो तो नित्य पूजन करे और धारण करने का हो तो उसे धारण करे।[1]

अथवा संक्षेप में इतना ही करे—

---

१. सोलह संस्कार जिस प्रकार बालक के गर्भ से लेकर जीवन के अन्त तक चलते हैं वैसे ही यहां भी होते हैं।

संक्षिप्त प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र—

कुशा अथवा दुर्वा लेकर उससे यन्त्र का स्पर्श करते हुए—

ॐ ऐं ह्रीं आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ॐ हंसः सोहं सोहं हंसः शिवः अस्य यंत्रस्य प्राणा इह प्राणाः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रीं क्रों अस्य यंत्रस्य जीव इह स्थितः। सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्। ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडया नः स्वस्ति ॥

इन मंत्रों को बोलकर यंत्र में प्राण, जीव, वाणी, मन, त्वचा, नेत्र, कर्ण, जिह्वा, नासिका आदि सभी इन्द्रियां निवास कर रही हैं और यह यंत्र साक्षात् भगवत्स्वरूप हो गया। ऐसा मानकर यन्त्र की अगले अध्याय में दी गई विधि के अनुसार पूजा करे।

२

यन्त्र-पूजन-प्रकार

१. ध्यान—

जिस यंत्र का पूजन करना हो, उसके अधिष्ठाता देव-देवी का सर्वप्रथम ध्यान करना चाहिए। ध्यान के समय दोनों हाथों की अंजलि बनाकर उसमें पुष्प रख ले और ध्यान का श्लोक[1] बोलकर नमस्कार करते हुए अंजलि के पुष्प यंत्र पर इस भावना से चढ़ाए कि देवता उसमें विराजमान हैं।

२. आवाहन—

आगच्छेह महादेवि ![2] सर्वसम्पत्प्रदायिनि ! ।
यावज्जपं समाप्येत तावत् त्वं सन्निधौ भव ॥

श्री···दैव्यै/देवाय नमः। अस्मिन् यन्त्रे आवाहनं समर्पयामि।

इतना बोलकर आवाहन के लिए पुष्प चढ़ाए।

३. आसन—

प्रसीद जगतां मातः संसारार्णव-तारिणि।
मया निवेदितं भक्त्या आसनं प्रतिगृह्यताम् ॥

श्री···दैव्यै/देवाय नमः, आसनं समर्पयामि।

यह बोलकर आसन के लिए पुष्प चढ़ाए।

---

१. ऐसे ध्यान के श्लोक हमने यंत्रों के प्रयोगों के साथ आगे लिखे हैं।

२. यहां यदि किसी देव के यंत्र की पूजा कर रहे हों तो वहां 'महादेव' ऐसा पद बदल कर पढ़ना चाहिये। इसी प्रकार अन्यत्र भी जहां 'देवि' लिखा हो वहां 'तात' ! ऐसा पद बदलकर बोलें।

४. पाद्य—

गङ्गादि-सर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाऽऽहृतम् ।
तोयमेतत्सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

श्री···देव्यै/देवाय पाद्यं समर्पयामि ।

इससे पाद्य के लिए जल चढ़ाए ।

५. अर्घ्य—

निधीनां सर्वदेवानां त्वमनर्घ्यगुणा ह्यसि ।
सिंहोपरि स्थिते देवी ! गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ॥

श्री···देव्यै/देवाय अर्घ्यं समर्पयामि ।

६. आचमन—

कर्पूरेण सुगन्धेन सुरभि स्वादु शीतलम् ।
तोयमाचमनीयार्थं देवीदं प्रतिगृह्यताम् ॥

श्री···देव्यै देवाय आचमनीयं समर्पयामि ।

७. स्नान—

मन्दाकिन्याः समानीतैर्हेमाम्भोरुवासितम् ।
स्नानं कुरुष्व देवेशि ! सलिलैश्च सुगन्धिभिः ॥

श्री···देव्यै देवाय स्नानं समर्पयामि ।

८. पञ्चामृत स्नान—

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करायुतम् ।
पंचामृतं मया नीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

श्री···देव्यै/देवाय पंचामृतस्नानं समर्पयामि ।

९. उद्वर्तन-स्नान—

नानासुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम् ।
उद्वर्तनं मया दत्त स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम ॥

श्री···देव्यै/देवाय उद्वर्तनं समर्पयामि तदनन्तरञ्च ।
समर्पयामि आचमनीयं च समर्पयामि ।

१०. वस्त्र तथा उपवस्त्र—

पट्टकूलयुगं देवि ! कंचुकेन समन्वितम् ।
परिधेहि कृपां कृत्वा, प्रसीद परमेश्वरि ! ॥

श्री···देव्यै/देवाय वस्त्रं उपवस्त्रं च समर्पयामि ।

११. चन्दन—

श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं च देवेशि ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥

श्री···देव्यै/देवाय चन्दनं समर्पयामि ।

१२. अक्षत—

अक्षतान् निर्मलान् शुभ्रान् मुक्ताफलसमन्वितान् ।
गृहाणेमान् महादेवि ! देहि मे निर्मलां मतिम् ॥

श्री···देव्यै/देवाय अक्षतान् समर्पयामि ।

१३. परिमल द्रव्य—

हरिद्रां कुङ्कुमं चैव सिन्दूरं कज्जलं तथा ।
भक्त्या निवेदितं देवि ! गृह्यतां मङ्गलं कुरु ॥

श्री···देव्यै/देवाय परिमलद्रव्यं समर्पयामि ॥

१४. पुष्पमाला आदि—

मन्दारपारिजतादि-पाटला-केतकानि च ।
जातीचम्पकपुष्पाणि गृहाणेमानि शोभने ॥

श्री···देव्यै/देवाय पुष्पाणि समर्पयामि ।

१५. धूप—

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

श्री···देव्यै/देवाय धूपं समर्पयामि ।

१६. दीप—

आज्यं व वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेशि ! त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥

श्री···देव्यै/देवाय दीपं दर्शयामि ।

१७. नैवेद्य, फल आदि—

अन्नं चतुर्विधं स्वादुरसैः षड्भिः समन्वितम् ।
नैवेद्यं गृह्यतां देवि ! भक्ति मे निश्चलां कुरु ॥

श्री···देव्यै/देवाय नैवेद्यं फलं च समर्पयामि ।

१८. ताम्बूल (पान सुपारी)—

एलालवङ्गकस्तूरीकर्पूरैश्च सुवासितम् ।
ताम्बूलं मुखवासार्थमर्पयामि सुरेश्वरि ! ॥

श्री···देव्यै/देवाय ताम्बूलं समर्पयामि ।

१९. दक्षिणा—

पूजाफलसमृद्ध्यर्थ तवाग्रे द्रव्यक्षिणा ।
स्थापिता तव प्रीत्यर्थं पूर्णान् कुरु मनोरथान् ॥

श्री···देव्यै/देवाय दक्षिणां समर्पयामि ।

२०. आरती—

दीपवर्तिसमायुक्तं कर्पूरेण समन्वितम् ।
आरार्तिक्यं तव प्रीत्यै भक्त्या मातः समर्पये ॥

श्री···देव्यै देवाय आरार्तिक्यं समर्पयामि ।

२१. पुष्पांजलि—

नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।
पुष्पांजलौ प्रदत्तानि गृहाण परमेश्वरि ॥

श्री···देव्यै/देवाय पुष्पांजलिं समर्पयामि ।

२२. **प्रदक्षिणा**—

यनि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण-पदे पदे ॥

२३. **प्रार्थना**—

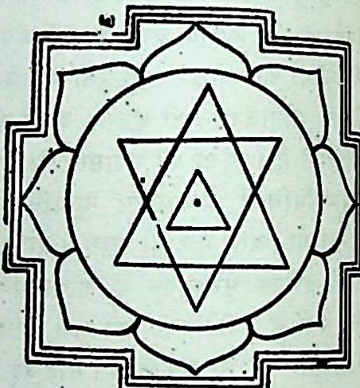
अपराध-सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षम्यतां परमेश्वरि ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि ।
यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे ॥

यह पूजाविधि अधिक न हो सके तो यन्त्र-पूजन अथवा यन्त्र धारण करने से पूर्व एक बार अवश्य करें । बाद में मंत्र न बोलकर केवल उनके नीचे लिखी हुई पंक्तियों को बोलकर ही पूजा कर लेनी चाहिए । ऐसा करने से मन की पवित्रता, वातावरण की शुद्धता, भावों की एकाग्रता तथा उत्साह की तीव्रता प्राप्त होती है । पूजा को उपासना का मुख्य अंग माना गया है । ऊपर बताई गई पूजा-विधि में सामान्यतः न्यूनाधिकता हो सकती है तथा मंत्रों में भी पाठान्तर या अन्य मंत्र भी बहुत से प्राप्त होते हैं । वैदिक मंत्रों के द्वारा पूजा करने के इच्छुक 'पुरुषसूक्त' के सोलह मंत्रों से पुरुष-देवों की और 'श्रीसूक्त' के सोलह मंत्रों से स्त्रीदेवियों की पूजा करते हैं । नाममन्त्र अथवा इष्ट मन्त्र से भी यह पूजा की जा सकती है । यदि यह पूजा करने में कोई साधक अपने को असमर्थ समझे तो किसी विद्वान् पुरोहित से करवा ले ।

३

श्रीगणेशयन्त्र और उपासना-विधि

भगवान् गणपति की उपासना सभी कर्मों में सद्यः सिद्धि देने वाली है। कलौ चण्डी-विनायकौ, 'कलियुग में चण्डी और विनायक प्रत्यक्ष देव हैं' इस उक्ति के अनुसार गणपति की उपासना अत्यावश्यक है। इनकी पूजा मूर्ति, चित्र और यंत्र तीनों रूप से होती है। 'स्वस्तिक' साक्षात् गणपति का ही स्वरूप है। गं बीज से भी स्वस्तिक का निर्माण होता है। अतः यदि अन्य यन्त्र न बनाएं तो स्वस्तिक बनाकर ही गणपति की उस पर पूजा करें और मंत्र-जप करें। अन्य यन्त्र इस प्रकार है—



यह यन्त्र पूर्वोक्त विधिपूर्वक लिखकर उत्तम मुहूर्त में इसकी प्रतिष्ठा करें और बाद में मंत्रजप से पूर्व इसकी पूजा करके मंत्रजप करें। 'शाक्तप्रमोद' में यंत्र का स्वरूप पहले षट्कोण और बाहर ऊर्ध्वमुख त्रिकोणवाला बताया है।

मन्त्र-जप-विधान

विनियोग—ॐ अस्य श्री महागणपतिमंत्रस्य गणकऋषिः निचृद्गायत्री छन्द. श्रीमहागणपतिर्देवता गं बीजं गीं शक्तिः गः कीलकं श्रीगणपतिप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

१. ऋष्यादि न्यास—

१. ॐ गणकऋषये नमः (शिरसि) २. ॐ निचृद् गायत्री छन्दसे नमः (मुखे)

३. ॐ श्रीमहागणपति देवतायै नमः (हृदये) ४. ,, गं बीजाय नमः (गुह्ये)

५. ,, ॐ गीं शक्तये नमः (पादयोः) ६. ,, गः कीलकाय नमः (नाभौ)

७. ,, विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)

२. करन्यास—

ॐ गं अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ गीं तर्जनीभ्यां नमः

,, गूं मध्यमाभ्यां नमः । ,, गैं अनामिकाभ्यां नमः ।

,, गौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ,, गः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

३. हृदयादिन्यास

ॐ गां हृदयाय नमः । ॐ गों शिरसे स्वाहा ।

,, गूं शिखायै वषट् । ,, गैं कवचाय हुम् ।

,, गौं नेत्रयाय वौषट् । ,, अस्त्राय फट् ।

इस प्रकार न्यास करके श्री गणपति का ध्यान करें

४. श्रीगणपतिध्यान

चतुर्भुजं रक्ततनुं त्रिनेत्रं पाशाङ्कुशौ मोदकपात्रदन्तौ ।
करैर्दधानं सरसीरुहस्थं, गणाधिनाथं शशिचूडमीडे ॥

अथवा—बीजापूरगदेक्षुकार्मुकरुजा चक्राब्जपाशोत्पल—
ब्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशप्रोद्यत्कराम्भोरुहः ।
ध्येयो वल्लभया सपद्मकरयाऽश्लिष्टोज्ज्वलद्भूषया,
विश्वोत्पत्तिविपत्तिसंस्थितिकरो विघ्नेश्वरोऽभीष्टदः ॥

इस प्रकार ध्यान करके पंचोपचार से मानस पूजा करे । तदनन्तर गणपति के आगे लिखे नामों से प्रणाम करे और दूर्वा चढ़ाए ।

गणपति प्रार्थना—

नमो नमः सुरवरपूजिताङ्घ्रये,
नमो नमो निरुपममंगलात्मने ।
नमो नमो विपुलपदैकसिद्धये,
नमो नमः करिकलभाननाय ते ॥

१. ॐ गणञ्जयाय नमः
२. ,, गणपतये नमः
३. ,, हेरम्बाय नमः
४. ,, धरणीधराय नमः
५. ,, महागणपतये नमः
६. ,, लक्षप्रदाय नमः
७. ,, क्षिप्रप्रसादनाय नमः
८. ,, अमोघसिद्धये नमः
९. ,, अमिताय नमः
१०. ,, मन्त्राय नमः
११. ॐ चिन्तामणये नमः
१२. ,, निधये नमः
१३. ,, सुमंगलाय नमः
१४. ,, बीजाय नमः
१५. ,, आशापूरकाय नमः
१६. ,, वरदाय नमः
१७. ,, शिवाय नम.
१८. ,, काश्यपाय नमः
१९. ,, नन्दनाय नमः
२०. ,, वाचासिद्धाय नमः
२१. ,, श्रीढुण्ढिराजाय नमः

विशेष पर्व के दिन (गणेश चतुर्थी प्रतिमास की अथवा भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को) २१ मोदक बनाकर इन नाममंत्रों से गणपति को अर्पित करने से वे प्रसन्न होकर सिद्धि प्रदान करते हैं ।

प्रत्येक मंत्र के जप से पूर्व कवच का पाठ किया जाता है । कहा जाता है कि—कवच को जाने बिना यदि मंत्र का जप किया जाये तो वह सिद्ध नहीं होता । अतः निम्नलिखित कवच का पाठ करें ।

कवच-पाठ

ॐ आमोदश्च शिरः पातु प्रमोदश्च शिखोपरि ।
सम्मोदो भ्रूयुगे पातु भ्रूमध्ये च गणाधिपः ॥

गणक्रीडश्चक्षुर्युगं नासायां गणनायकः ।
जिह्वायां सुमुखः पातु ग्रीवायां दुर्म्मुखः सदा ॥
विघ्नेशो हृदये पातु बाहुयुग्मे सदा मम ।
विघ्नकर्त्ता च उदरे विघ्नहर्त्ता च लिंगके ॥
गजवक्त्रः कटीदेशे एकदन्तो नितम्बके ।
लम्बोदरः सदा पातु गुह्यदेशे ममारुणः ॥
व्यालयज्ञोपवीती मां पातु पादयुगे सदा ।
जापकः सर्वदा पातु जानुजंघे गणाधिपः ॥
हारिद्रः सर्वदा पातु सर्वांगे गणनायकः ॥

इसके पश्चात् नीचे लिखे हुए किसी एक मंत्र का जप करे—

जपमन्त्र—

(१) ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं गं गणपतये वर वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा ।

(२) इस मंत्र में नं० १ के मंत्र के अनुसार ही मंत्र होगा किन्तु इसमें 'स्वाहा' के स्थान पर 'ठः ठः' का प्रयोग होता है ।

'ॐ गं गणपतये नमः' इस मन्त्र का भी जप किया जाता है ।

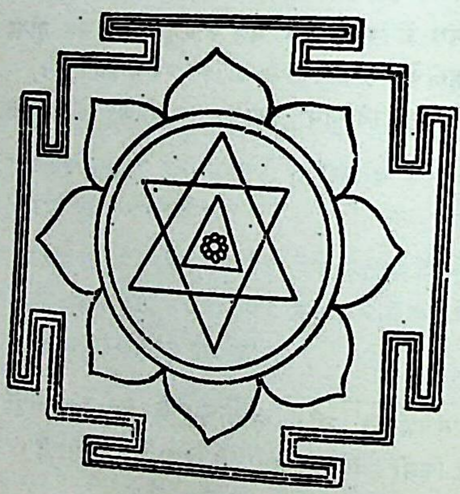
१—हमने 'मंत्रशक्ति' और 'तंत्रशक्ति' में जिन-जिन मंत्रों का उल्लेख किया है उनमें से किसी मंत्र का जप भी किया जा सकता है। यह प्रक्रिया सभी मंत्रों के साथ उसके देवमंत्र के बारे में समझें ।

४

श्री भैरवयन्त्र और उपासना विधि

मध्ये चाष्टदलं पद्मं कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् ।
त्रिकोणं च ततः कृत्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत् ॥
वर्तुलं चाष्टपत्रं च चतुस्त्रयात्मकम् ।

इस प्रमाण के अनुसार श्रीभैरव का यंत्र विधिपूर्वक बनाकर प्रतिष्ठित कर लें तथा बाद में जप करने से पूर्व प्रतिदिन इसकी पूजा करें और इसे सामने रखकर श्रीभैरव की कृपा प्राप्त करने के लिए नीचे लिखे अनुसार 'कवच-पाठ' करके जप करे। कवच का पाठ करके जप करने से किसी प्रकार-का विघ्न नहीं आता है और कार्यसिद्धि शीघ्र होती है। यंत्र की आकृति इस प्रकार है—



श्री बटुकभैरव मंत्र की जप विधि

विनियोगः—

ॐ अस्य श्रीआपदुद्धारण-बटुकभैरवमन्त्रस्य बृहदारण्यको नाम ऋषिस्त्रिष्टुप छन्दः श्रीबटुकभैरवो देवता ह्रीं बीजं स्वाहा शक्तिः भैरवः कीलकं मम धर्मार्थकाममोक्षार्थं श्रीबटुकभैरवप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

इतना बोलकर आचमनी से जल छोड़ दे।

१. ऋष्यादिन्यास—

(१) अथ ऋष्यादिन्यासः

१. बृहदारण्यकऋषये नमः	शिरसि (मस्तक का स्पर्श करे)
२. त्रिष्टुप्छन्दसे नमः	मुखे (मुख का स्पर्श करे)
३. श्रीबटुकभैरवदेवतायै नमः	हृदये (हृदय का स्पर्श करे)
४. ह्रींबीजाय नमः	गुह्ये (कटि भाग का स्पर्श करे)
५. स्वाहा शक्तये नमः	पादयोः (दोनों पैरों का स्पर्श करे)
६. भैरवकीलकाय नमः	नाभौ (नाभि का स्पर्श करे)
७. विनियोगाय नमः	सर्वाङ्गे (सिर से पैर तक का स्पर्श करे)

(२) अथ करन्यासः

१. ॐ ह्रां वां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
(दोनों तर्जनियों के अग्रभाग से अंगूठों के मूल से अग्रभाग तक का स्पर्श करे।)

२. ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः।
(दोनों अंगूठों के अग्रभाग से तर्जनियों के मूल से अग्रभाग तक का स्पर्श करे।)

---

१. अंगूठे और अनामिका के अग्रभाग को मिलाने से तत्त्वमुद्रा बनती है। ऐसी दोनों हाथों की तत्त्वमुद्राओं से न्यास का विधान है।

३. ॐ हूं वूं मध्यमाभ्यां नमः। (पूर्ववत् मध्यमा का स्पर्श करे।)
४. ॐ हैं वैं अनामिकाभ्यां नमः (पूर्ववत् अनामिका का स्पर्श करे)
५. ॐ ह्रौं वौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः (पूर्ववत् कनिष्ठिका का स्पर्श करे)
६. ॐ हः वः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। (पूर्ववत् करतल और कर के पृष्ठ भाग का स्पर्श करे।)

(३) षडङ्गन्यास—

१. ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः। (हृदय का स्पर्श करे)
२. ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा। (मस्तक का स्पर्श करे)
३. ॐ हूं वूं शिखायै वषट्। (शिखा का स्पर्श करे)
४. ॐ हैं वैं कवचाय हुं। (भुजाओं का स्पर्श करे)
५. ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्। (दोनों नेत्र एवं उनके मध्य का स्पर्श करे।)
६. ॐ हः वः अस्त्राय फट्। (तर्जनी और मध्यमा से ताली बजाए।)

(४) मन्त्रन्यास :—

१. ॐ ह्रां ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। (हृदयाय नमः)
२. ॐ ह्रीं बटुकाय तर्जनीभ्यां नमः। (शिरसे स्वाहा)
३. ॐ हूं आपदुद्धारणाय मध्यमाभ्यां नमः। (शिखायै वषट्)
४. ॐ हैं कुरु कुरु अनामिकाभ्यां नमः। (कवचाय हुम्)
५. ॐ ह्रौं बटुकाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। (नेत्रत्रयाय वौषट्)
६. ॐ हः ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्राय फट्)

श्रीभैरवध्यान—

करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि-
स्तरुणतिमिरवर्णो व्यालयज्ञोपवीती।

ऋतुसमयसपर्या विघ्न-विच्छित्तिहेतु-
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

इस प्रकार न्यास एवं ध्यान करके पहले बताए अनुसार मानसोपचार पूजा करे तथा कवच का पाठ करे—

कवच पाठ

ॐ पातु शिरसि नित्यं पातु ह्रीं कण्ठदेशके ।
वटुकं पातु हृदये आपदुद्धारणाय च ॥ १ ॥
कुरुद्वयं मे लिंगस्य आधारे वटुकाय च ।
सर्वदा पातु ह्रीं बीजं बाह्वोर्युगलमेव च ॥ २ ॥
षडंगसहितो देवो नित्यं रक्षतु भैरवः ।
ह्रीं बटुकाय सततं सर्वांगे मम सर्वदा ॥ ३ ॥
ह्रीं कालाय पादयोः पातु पातु वीरासनं हृदि ।
क्लीं महाकालः शिरः पातु कण्ठदेशे तु भैरवः ॥ ४ ॥
दण्डपाणिर्गुह्यमूले भैरवो-सहितस्ततः ।
ललिताभैरवः पातु अष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥ ५ ॥
विश्वनाथः सदा पातु सर्वांगे मम सर्वदा ।
अन्नपूर्णा सदा पातु अंसं रक्षतु चण्डिका ॥ ६ ॥
असिताङ्गः शिरः पातु ललाटं पातु भैरवः ।
चण्डभैरवः पातु वक्त्रे कण्ठे श्रीक्रोधभैरवः ॥ ७ ॥
मूलाधारं भीषणश्च बाहुयुग्मं च भैरवः ।
हंसबीजं पातु हृदि सोऽहं रक्षतु प्राणयोः ॥ ८ ॥
प्राणापानसमानं च उदानं व्यानमेव च ।
रक्षन्तु द्वारमूले तु दश दिक्षु समन्ततः ॥ ९ ॥
प्रणवः पातु सर्वांगे लज्जाबीजं महाभये ।
इति श्रीब्रह्मकवचं भैरवस्य प्रकीर्तितम् ॥ १० ॥

अथ मालाप्रार्थना—

महामाले महामाये ! सर्वशक्तिस्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥
अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

जप-मन्त्रः—

ॐ ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं ।

यथाशक्ति जप करके अन्त में प्रार्थना करे—

त्वं माले ! सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा भव ।
शिवं कुरुष्व मे भद्रे ! यशोवीर्यञ्च देहि मे ॥

इसके पश्चात् जप को श्रीभैरवार्पण करे—

अनेन श्रीवटुकभैरवमन्त्रजपाख्येन कर्मणा
श्रीवटुकभैरवः प्रीयताम् ॥[1]

॥ इति जपविधिः ॥

---

१. माला प्रार्थना और जप-समर्पण सब जगह इसी प्रकार करें, केवल देवता का नाम बदल दें ।

५

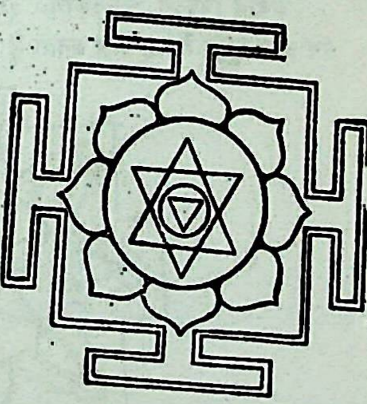
प्रगल्यात्मक महामृत्युञ्जय ऊर्ध्वमुखयंत्र

भगवान् महामृत्युञ्जय शिव की उपासना सब प्रकार के भयानक रागों को शान्त करने में अचूक फल देती है। जो लोग किसी राजरोग से ग्रस्त हों उन्हें नीचे लिखा हुआ यंत्र तांबे या चांदी के पतरे पर अथवा भोजपत्र पर शुभमुहूर्त में विधिपूर्वक तैयार करके नित्य पूजा और मंत्रजप करना चाहिए तथा यंत्र धारण करना चाहिए।

यन्त्रोद्धार—

त्रिकोणं वर्तुलं बाह्ये षट्कोणं तदनन्तरम्।
सप्ताष्टदलपद्मानि भूपुरद्वयवेष्टितम्॥
महामृत्युञ्जयाख्यं च सर्वारिष्ट-हरं परम्।
यंत्रं पूज्यं सदा सेव्यं साधकैः परमाद्भुतम्॥

इसके अनुसार त्रिकोण, वृत्त, षट्कोण, सप्तदलकमल अथवा अष्टदल कमल और दो भूपुर से वेष्टित यह यन्त्र बनता है। आकृति इस प्रकार है—



इस यन्त्र की प्राणप्रतिष्ठा करके नित्यपूजा करें और 'मंत्रशक्ति' के अनुसार विनियोगादि करके जप से पूर्व निम्नलिखित ध्यान करें—

हस्ताम्भोजयुगस्थकुम्भयुगलादुद्धृत्य तोयं शिरो,
ह्यक्षस्रङ्मृगहस्तमम्बुजगतं मूर्धस्थचन्द्रस्रवत्।

सिञ्चन्तं करयोर्युगेन दधतं स्वाङ्के सुकुम्भौ करौ,
पीयूषोन्नतनुं भजे सगिरिजं मृत्युञ्जयं त्र्यम्बकम् ॥

फिर इस मृत्युञ्जय-मन्त्र का जप करें—

ॐ हौं जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥ स्वः भुवः भूः ॐ सः जूं हौं ॐ। (अन्य मंत्र मंत्रशक्ति ग्रंथ में देखें।)

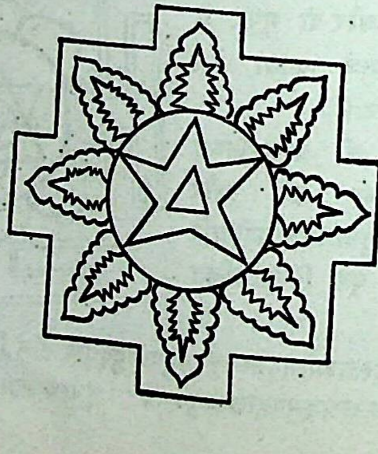
मृतसञ्जीवनी यन्त्र

महामृत्युञ्जय यन्त्र के समान ही 'मृतसञ्जीवनी यन्त्र' भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह भी समस्त रोगों के नाश के लिए अचूक है। इसे भी पूर्ववत् तैयार करके पूजन करता रहे और अभिमंत्रित करके इसे धारण भी किया जा सकता है।

यन्त्रोद्धार—

त्रिकोणं पञ्चकोणं च वृत्तमष्टदलावृतम्।
दले दलेऽष्टपत्राणि भूपुरं तदनन्तरम् ॥

अर्थात् त्रिकोण, पञ्चकोण, वृत्त, अष्टदल कमल, प्रत्येक में आठ-आठ पत्र और भूपुर से यह यन्त्र बनता है। आकृति इस प्रकार है—



यन्त्र का ध्यान इस प्रकार है—

चन्द्रार्काग्नि-विलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तःस्थितं,
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभम्।
कोटीन्दुप्रगलत् सुधाप्लुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं,
कान्तं विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावये॥[1]

मंत्र—१-ॐ जूं सः मां पालय पालय।[2]

अथवा—२-ॐ ह्रौं जूं सः [अमुकं]

जीवय-जीवय पालय-पालय सः जूं ह्रौं ॐ

३. ॐ मृत्युञ्जय महारुद्र त्राहि मां शरणागतम्।
जन्ममृत्युजराव्याधिपीडितं कर्मबन्धनैः॥

---

१. मन्त्र से पूर्व कवच-पाठ भी है; किन्तु वह विस्तृत होने से यहां नहीं दिया गया है। अन्य ग्रंथों में देखें। विनियोगादि 'मन्त्रशक्ति' में दिए हैं।

२. यहां मां अथवा अमुक के स्थान पर जो बीमार हो उसके नाम के साथ द्वितीया विभक्ति का एकवचन जोड़कर जप किये जाने का विधान है।

६

सूर्ययंत्र और उपासना-विधि

पूर्वमष्टदलं पद्मप्रणवादि-प्रतिष्ठितम् ।
मायाबीजं दलाष्टाग्रं यन्त्रमुद्धारयेदिति ॥
आदित्यं भास्करं भानुं रविं सूर्यं दिवाकरम् ।
मार्तण्डं तपनं चेति दलेष्वष्ठसु योजयेत् ॥
दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला तथा ।
अमोघा विद्युता चेति मध्ये श्रीः सर्वतोमुखी ॥



इसके अनुसार भगवान् सूर्यनारायण की उपासना के लिये यन्त्र बनाना चाहिए। मध्य में मायाबीज, आठों दलों में आदित्यादि सूर्य के आठ नाम तथा सूक्ष्मा आदि आठ कलाओं के नाम लिखकर मध्य में चारों ओर 'श्री' बीज लिखने से यह यन्त्र बनता है। शास्त्रों में कहा गया है कि 'आरोग्यं भास्करादिच्छेत्' अर्थात् यदि शरीर में आरोग्य की इच्छा हो तो भगवान् भास्कर से प्रार्थना करे। इस दृष्टि से सूर्य की उपासना प्रत्येक व्यक्ति के लिए हितकर है।

यन्त्र को विधिवत् प्रतिष्ठित करके ॐ घृणिः सूर्य आदित्य ॐ इस मंत्र से प्रतिदिन यन्त्र की पूजा करे।

मन्त्रजप-विधान—

ॐ अस्य श्रीआदित्यमहामन्त्रस्य देवभागऋषिः गायत्री छन्दः आदित्यो देवता मम श्रीआदित्यप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

१. **ऋष्यादि-न्यास**—१. देवभागऋषये नमः (शिरसि), २. गायत्री छन्दसे नमः (मुखे), ३. आदित्यदेवतायै नमः (हृदये), ४. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

२. **करन्यास—**

१. सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा-अंगुष्ठाभ्यां नमः ।			
२. ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे		,,	तर्जनीभ्यां स्वाहा
३. विष्णवे	,,	,,	मध्यमाभ्यां वषट्
४. रुद्राय	,,	,,	अनामिकाभ्यां हुम्
५. अग्नये	,,	,,	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्
६. सर्वाय	,,	,,	करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्

३. **हृदयादि न्यास—**

१. सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा-हृदयाय नमः			
२. ब्रह्मणे	,,	,,	शिरसे स्वाहा
३. विष्णवे	,,	,,	शिखायै वषट्
४. रुद्राय	,,	,,	कवचाय हुम्
५. अग्नये ,,	,,	,,	नेत्रत्रयाय वौषट्
६. सर्वाय ,,	,,	,,	अस्त्राय फट्

४. **श्रीसूर्यनारायण ध्यान—**

भास्वद्रत्नाढ्यमौलिः स्फुरदधररुचा रंजितश्चारुकेशो,
भास्वान् यो दिव्यतेजाः करकमलयुतः स्वर्णवर्णः प्रभाभिः ।
विश्वाकाशावकाशो ग्रहगणसहितो भाति यश्चोदयाद्रौ,
सर्वानन्दप्रदाता हरिहरनमितः पातु मां विश्वचक्षुः ॥

इस प्रकार ध्यान करके कवच का पाठ करना चाहिए—

कवच पाठ

प्रणवो मे शिरः पातु घृणिर्म्मे पातु भालकम् ।
सूर्योऽव्यान्नयनद्वन्द्वमादित्यः कर्णयुग्मकम् ॥
अष्टाक्षरो महामन्त्रः सर्वाभीष्ट-फलप्रदः ।
ह्रीं बीजं मे मुखं पातु हृदयं भुवनेश्वरी ।
चन्द्रबीजं विसर्गाढ्यं सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥
अक्षरोऽसौ महामन्त्रः सर्वतन्त्रेषु गोपितः ।
शिवो वह्निसमायुक्तो वामाक्षि-विन्दु-भूषितः ।
एकाक्षरो महामन्त्रः श्रीसूर्यस्य प्रकीर्तितः ॥
गुह्याद् गुह्यतरो मन्त्रो वांछाचिन्तामणिः स्मृतः ।
शीर्षादि-पादपर्य्यन्तं सदा पातु मनूत्तमः ॥

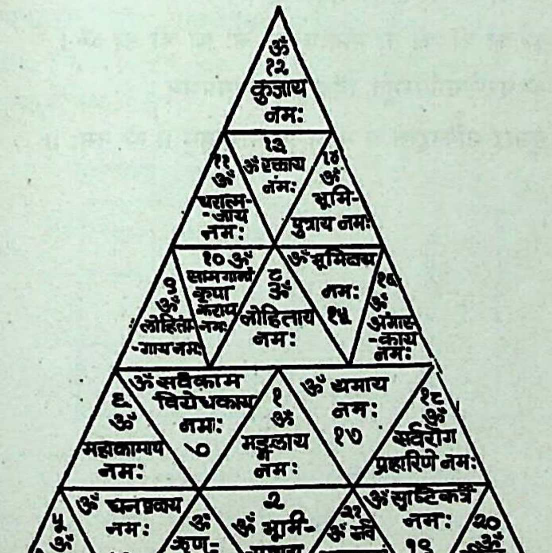
तदनन्तर मंत्र जप करे—

मन्त्र-१. ॐ घृणिः सूर्य आदित्यः ।
२. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः ।

७

मंगलयंत्र और उपासना-विधि

मंगल-ग्रह की उपासना ऋण से छुटकारा पाने के लिए तथा ब्लड [प्रे]शर जैसे रोगों से मुक्ति पाने के लिए अचूक उपाय है। मंगल का यंत्र त्रिकोण [आ]कार के ताम्रपत्र पर बनाकर उसमें निम्नलिखित २१ नाम ॐ तथा नाम [के] साथ चतुर्थी विभक्ति लगा कर नमः पद के साथ लिखने का विधान है यंत्र [क]ा स्वरूप इस प्रकार है—



तथा इस यंत्र में लिखे हुए नामों का मूल पाठ निम्नलिखित है—

मंगलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः।
स्थिरासनो महाकायः सर्वकामविरोधकः॥ १॥
लोहितो लोहितांगश्च सामगानां कृपाकरः।
धरात्मजः कुजो रक्तो भूमिपुत्रश्च भूमिदः॥ २॥
अंगारको यमश्चैव सर्वरोग-प्रहारकः।
सृष्टिकर्ता वृष्टिकर्ता सर्वकामफलप्रदः॥ ३॥

इस यंत्र को प्रतिष्ठित करके प्रतिदिन इसकी पूजा करनी चाहिए। यथासम्भव पूजा में लाल रंग के फूल तथा गुड़ से बनी वस्तु का भोग लगाना आवश्यक है। मंगल का मंत्र और उसके जप का मंत्र इस प्रकार है—

१—ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः

२—ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः सः क्रौं क्रीं क्रां ॐ।

३—ॐ धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्।
कुमारं शक्तिहस्तं च मंगलं प्रणमाम्यहम्॥ ॐ नमः॥

नवग्रहों के यंत्र और उपासना-विधि

सूर्यादि नौ ग्रहों की सुदृष्टि से सभी काम जहां सिद्ध हो जाते हैं वहीं उनकी छोटी सी कुदृष्टि बड़े-से-बड़े बनते हुए कार्यों को विगाड़ देती है। जन्मकुण्डली में खराब स्थानों पर ग्रहों की स्थिति अथवा शत्रुग्रहों के साथ स्थिति होने तथा उनकी दशा ठीक न होने से अनेक तरह की पीड़ाएं होती हैं। अतः उनसे छुटकारा पाने के लिए नीचे लिखे अंकयंत्रों को विधिवत् शुभमुहूर्त्त में लिखकर पूजा, धूप-दीप करके धारण करें। (मंत्र तथा अन्य विधि का हमने 'मंत्रशक्ति' और 'तंत्र-शक्ति' में निर्देश दिया है, वहीं देखें)। ये मंत्र क्रमशः १५, १८, २१, २४, २७, ३०, ३३, ३६ और ३९ की संख्याओं वाले सर्वतोभद्र यन्त्र के रूप में हैं।[1]

सूर्य यन्त्र (पंचदशांक)

६	१	८
७	५	३
२	९	४

चन्द्रयन्त्र (अष्टादशांक)

७	२	९
८	६	४
३	१०	५

१—'सर्वतोभद्र-यन्त्र' का तात्पर्य है चारों दिशा और विदिशाओं में तीन-तीन कोष्ठकों को गिनने से एक समान अङ्कों का योग आना। ताण्डव-यंत्र आदि ग्रन्थों में ऐसे यंत्रों का विधान है।

मङ्गलयन्त्र (एकविंशांक)

८	३	१०
९	७	५
४	११	६

बुधयन्त्र (चतुर्विंशांक)

९	४	११
१०	८	६
५	१२	७

बृहस्पतियन्त्र (सप्तविंशांक)

१०	५	१२
११	९	७
६	१३	८

शुक्रयन्त्र (त्रिंशांक)

११	६	१३
१२	१०	८
७	१४	९

शनियन्त्र (त्रयस्त्रिंशांक)

१२	७	१४
१३	११	९
८	१५	१०

राहुयन्त्र (षट्त्रिंशांक)

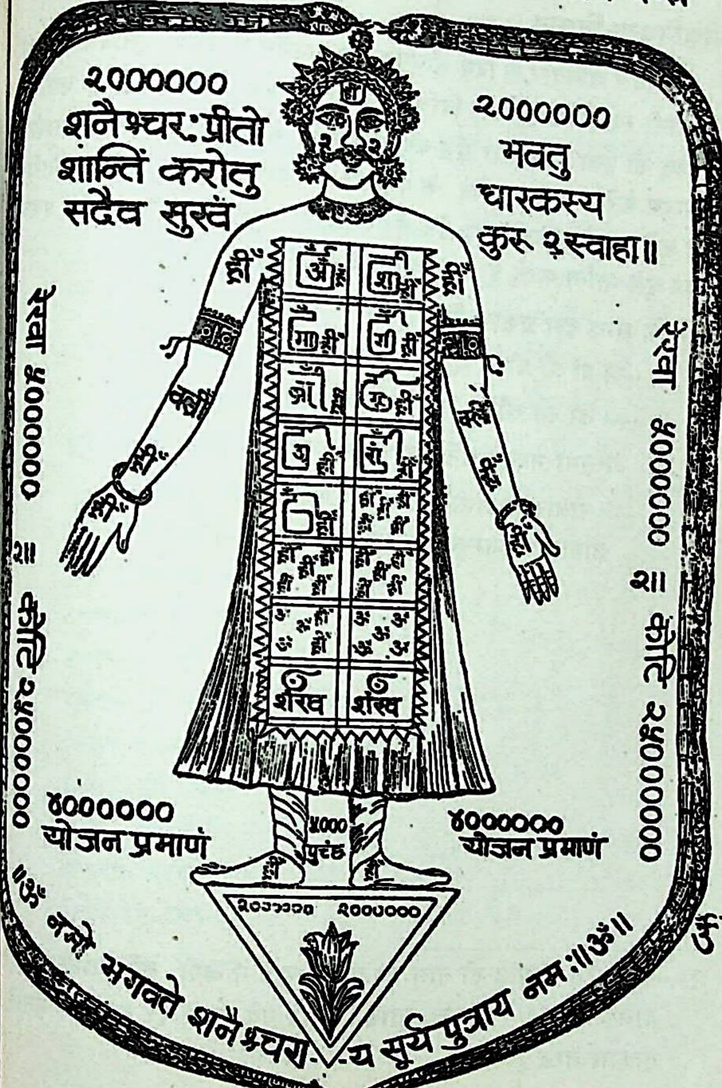
१३	८	१५
१४	१२	१०
९	१६	११

केतुयन्त्र (ऊनचत्वारिंशांक)

१४	९	१६
१५	१३	११
१०	१७	१२

इन यंत्रों के केन्द्र में क्रमशः ५ से १३ तक के अंक आए हैं। जिस प्रकार सूर्य और मंगल के नामाक्षर यंत्र दिये गए हैं उसी प्रकार विभिन्न आकृतियों में अन्य ग्रहों के यंत्र भी प्राप्त होते हैं, जिन्हें विस्तारभय से यहां नहीं दे रहे हैं। अन्य ग्रंथों से उन्हें प्राप्त करें। ग्रहों की आकृति में भी ये यंत्र लिखे जाते हैं।

श्री शनि-यन्त्र


२००००००
शनैश्चर:प्रीतो
शान्तिं करोतु
सदैव सुखं
२००००००
भवतु
धारकस्य
कुरु २स्वाहा॥
रेखा ४००००००
२॥ कोटि २४००००००
रेखा ४००००००
२॥ कोटि २४००००००
४००००००
योजन प्रमाणं
४००००००
योजन प्रमाणं
॥ॐ नमो भगवते शनैश्चराय सूर्य पुत्राय नम:॥ॐ॥

श्रीशनियन्त्र-विधान

शनियंत्र शनिवार के दिन भोजपत्र पर अष्टगंध से अथवा गुलाबजल मिली हुई काली स्याही से लिखकर विधिवत् प्रतिष्ठित करें। तेल का दीपक लगाकर शनिदेव की पूजा करें और यंत्र को काले कपड़े के टुकड़े में लपेट कर तावीज में धारण करें। अथवा[1] लोहे के पत्र पर खुदवाकर प्रतिष्ठापूर्वक प्रतिदिन पूजा करें। हर शनिवार को तैल से स्नान भी कराएं। इससे शनिदेव प्रसन्न होकर सुख-शान्ति करते हैं। ग्रह दशा की पीड़ा नहीं होती है।

शनि के मन्त्र इस प्रकार हैं—

१—ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः शनैश्चराय नमः।

२—ॐ खां खीं खौं सः शनैश्चराय नमः।

३—ॐ नमो भगवते शनैश्चराय सूर्यपुत्राय नमः ॐ।

४—ॐ नीलांजनसमाभास रविपुत्रं यमाग्रजम्।
छायामार्तण्डसम्भूतं नमामि श्रीशनैश्चरम् ॥ ॐ ॥

१—श्याम रंग के घोड़े की नाल का अथवा नाव में लगी हुई पुरानी कील में डालकर अथवा उनको गलाकर बनाये गये पतरे पर यह यंत्र बनावें। तत्काल लाभ होगा।

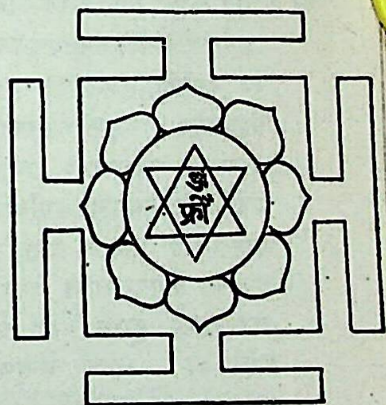
१०

कार्तवीर्यार्जुन यंत्र और उपासना विधि

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि कार्तवीर्यस्य भूपतेः
षट्कोणं तु पूर्वं बहिष्टदलं स्मृतम् ॥ १ ॥
भूपुरं विलिखेत् पश्चात् सर्वकार्याणि साधयेत् ।
यन्त्रोद्धारमिदं प्रोक्तं गोप्यं कुरु महेश्वरि ॥ २ ॥

इसके अनुसार षट्कोण, अष्टदल और भूपुर से यह यंत्र बनता है। इसका पूजन करके मंत्रजप करें। मंत्र जप की विधि इस प्रकार है।

भगवान् विष्णु के सुदर्शन-चक्र के अवतार रूप में अवतीर्ण श्री कार्तवीर्यार्जुन की पूजा, मंत्रजप तथा यंत्रधारण का बड़ा माहात्म्य तंत्रशास्त्रों में मिलता है। सभी प्रकार के कार्यों की सिद्धि के लिये, मुकदमे में विजय, निर्वाचन में विजय आदि के लिये इनकी पूजा अमोघ सिद्धिदायक है। गई हुई वस्तु की प्राप्ति के लिए इनका मंत्रजप तत्काल फल देता है। विधि इस प्रकार है—



मन्त्र-जप विधान

ॐ अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुनमंत्रस्य दत्तात्रेयऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीकार्तवीर्यार्जुनो देवता फ्रों बीजं ह्रीं शक्तिः क्लीं कीलकं ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

१. ऋष्यादि न्यास

१. दत्तात्रेय ऋषये नमः (शिरसि) ४. फ्रों बीजाय नमः (गुह्ये)

२. अनुष्टुप् छन्दसे नमः (मुखे) ५. ह्रीं शक्तये नमः (पादयोः)

३. श्रीकार्तवीर्यार्जुनदेवतायै नमः (हृदये)

६. क्लींकीलकाय नमः (नाभौ)

२-३. करन्यास तथा हृदयादिन्यास

'ओ३म् श्रीकार्तवीर्यार्जुनाय नमः'

इस मंत्र से करें।

श्रीकार्तवीर्यार्जुन ध्यान—

सहस्रबाहुं सशरं सचापं, रक्ताम्बरं रक्तकिरीटभूषम्।
चौरादिदुष्टार्तिहरं वरं तं, वन्दे महाशक्तिककार्तवीर्यम्॥

मंत्र—ओ३म् फ्रों ह्रीं क्लीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः।

जप के अन्त में पुनः न्यास करके निम्नलिखित स्तोत्र का पाठ करें।

—: अथ कार्तवीर्यार्जुनद्वादशनामादिस्तोत्रम् :—

ॐ कार्तवीर्यः खलद्वेषी कृतवीर्यसुतो बली।
सहस्रबाहुः शत्रुघ्नो रक्तवासा धनुर्धरः॥ १॥
रक्तगन्धो रक्तमाल्यो राजा स्मर्तुरभीष्टदः।
द्वादशैतानि नामानि कार्तवीर्यस्य यः पठेत्॥ २॥
सम्पदस्तस्य जायन्ते जना सर्वे वशं गताः।
राजानो दासतां यान्ति रिपवो वश्यतां गताः॥ ३॥
आनयत्याशु दूरस्थं क्षेम-लाभयुत प्रियम्।
सर्वसिद्धिकरं स्तोत्रं जप्तृणां सर्वकामदम्॥ ४॥
कार्तवीर्यं महावीर्यं सर्वशत्रुविनाशनं।
सर्वत्र सर्वदा तिष्ठ दुष्टान् नाशय पाहि माम्॥ ५॥
उत्तिष्ठ दुष्टदमन सप्तद्वीपैक-पालक।
त्वामेव शरणं प्राप्तं सर्वतो रक्ष रक्ष माम्॥ ६॥

दुष्टघ्न किं त्वं स्वपिषि किं तिष्ठसि किं चिरायसि ?।
पाहि नः सर्वदा सर्वभयेभ्यः स्वसुतानिव ॥ ७ ॥
मतिभंगः स्वरो हीनः शत्रूणां मुखभंजनम्।
रिपूणां च सदैवास्तु सभायां मे जयं कुरु ॥ ८ ॥
यस्य स्मरणमात्रेण सर्वदुःख-क्षयो भवेत्।
तं नमामि महावीरमर्जुनं कृतवीर्यजम् ॥ ९ ॥
हैहयाधिपतेः स्तोत्रं सहस्रावृत्तिकं कृतम्।
वांछितार्थ-प्रदं नृणां शूद्राद्यैर्न श्रुतं यदि ॥ १० ॥

इस स्तोत्र का पाठ करके प्रणाम करें तथा क्षमा प्रार्थना करें।

अन्य ग्रंथों में इस स्तोत्र के आरम्भ में दिये गए १२ नाममंत्रों के जप का भी विधान है। नामजप में चतुर्थी विभक्ति लगाकर जप इस प्रकार कर सकते हैं—

१. ॐ कार्तवीर्याय नमः	७. ॐ रक्तवाससे नमः
२. ,, खलद्वेषिणे ,,	८. ,, धनुर्धराय ,,
३. ,, कृतवीर्यसुताय ,,	९. ,, रक्तगन्धाय नमः
४. ,, बलिने ,,	१०. ,, रक्तमाल्याय नमः
५. ,, सहस्रबाहवे ,,	११. ,, राज्ञे नमः
६. ,, शत्रुघ्नाय ,,	१८. ,, स्मर्तुरभीष्टदाय नमः

कुछ अन्य ध्यान के पद्य इस प्रकार हैं—

अव्यात् सर्वभयात् प्रभाकरनिभः प्रद्योतनो द्योतितः,
स्वर्णस्रक्परिवीतकन्धरधरो रक्तांशुकोष्णीषवान्।
नानारत्नविभूषितः करसहस्रार्धात्तबाणासनो,
बाणार्धात्तसहस्रबाहुरनिशं श्रीवल्लभो नः प्रभुः ॥ १ ॥

दोर्दण्डेषु सहस्रशोभितकरेष्वेकेष्वजस्रं लसत्,
कोदण्डैः सशरैरुदग्रविशिखैराधूतविष्वक्प्रभुः

ब्रह्माण्डं परिपूरयंस्तदखिलं गण्डस्थलालोलितो,
द्योतत्कुण्डलमण्डितो विजयते श्रीकार्तवीर्यः प्रभुः॥ २ ॥

दस महाविद्याओं की उपासना

[संक्षिप्त परिचय]

उत्पत्ति—दस महाविद्याओं की उत्पत्ति के बारे में पुराण तथा तंत्रग्रंथों में विविध आख्यान प्राप्त होते हैं। 'दुर्गासप्तशती' में—'महादेवी अम्बिका का जब चण्ड-मुण्ड के साथ संग्राम होता है तब भगवती शत्रुओं पर भीषण क्रोध करती हैं। उस कोप के कारण उनका मुख श्याम वर्ण का बन जाता है। उसी श्याम वर्ण का एकीभूत पुंज भौंहों के तन जाने पर वहां से आविर्भूत हुआ और वही 'काली' नाम से विख्यात हुई—

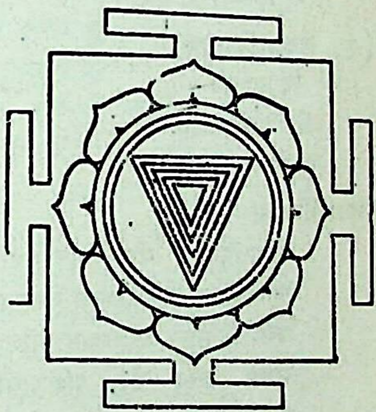
भृकुटीकुटिलात् तस्या ललाटफलकाद् ध्रुवम्।
काली करालवदना विनिष्क्रान्ताऽतिभीषणा॥

यही काली 'रक्तबीज' आदि अन्य राक्षसों के विनाश के लिए अपने तेज से अन्य देवियों को उत्पन्न करती है। जिनके शास्त्रीय स्वरूप एवं नाम **दशमहाविद्या** के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं—**१. काली, २. तारा, ३. षोडशी (श्रीविद्या), ४. भुवनेश्वरी, ५. भैरवी (त्रिपुरभैरवी), ६. छिन्नमस्ता, ७. धूमावती, ८. बगलामुखी: ९. मातङ्गी और १०. कमला-महालक्ष्मी।**

उपासना—दस महाविद्याओं को **सिद्धविद्या** कहा गया है जिसका तात्पर्य यह है कि ये विद्याएं. उपासना के द्वारा प्रसन्न होकर शीघ्र सिद्धि प्रदान करती हैं। तंत्रशास्त्रों में प्रत्येक महाविद्या की उपासना के विधान बहुत विस्तार से दिए गए हैं और एक-एक का स्वतंत्र रूप से तंत्र ग्रंथ भी बना है किन्तु वह अति विस्तृत है। कलिकाल के इस यान्त्रिक जीवन में कुछ विरले ही व्यक्ति इनकी सर्वांगपूर्ण साधना कर सकते हैं। अतः हम यहां संक्षिप्त साधना-विधि और यंत्रों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं। उपासक को चाहिए कि वह अपनी परम्परा और अभिरुचि को ध्यान में रखकर इस साधना में प्रवृत्त होकर आत्मकल्याण के पथ पर अग्रसर होने का प्रयत्न करे।

कालीयन्त्र और उपासना विधि

आदौ त्रिकोणमालिख्य त्रिकोणं तद् बहिर्लिखेत् ।
ततो वै विलिखेद् मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥ १ ॥
ततस्त्रिवृत्तमालिख्य लिखेदष्टदलं ततः ।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद् भूपुरमेककम् ॥ २ ॥



'शाक्त-प्रमोद' के इस निर्देश के अनुसार काली यन्त्र की रचना करनी चाहिए। यह यंत्र पूजन-यंत्र है। अतः इसमें कोई अक्षर अथवा अंक नहीं लिखा जाता। इस यंत्र को पूजा के लिए धातु पत्र पर बनवा कर शुभमुहूर्त में प्रतिष्ठा कर ले। बाद में प्रतिदिन नीचे लिखे अनुसार यन्त्र की पूजा, कालीदेवी का ध्यान तथा मंत्रजप करे। इससे सब प्रकार के सुख और लक्ष्मी प्राप्ति होती है। पूजन के लिए मन्त्र—'ॐ क्रीं कालिकायै नमः'। इस मंत्र से यंत्र की और कालिका के चित्र की विधिवत् पूजा करे।

मन्त्रजप विधान—

अस्य श्रीदक्षिणकालिकामन्त्रस्य भैरवऋषिरुष्णिक्छन्दो दक्षिणकालिका देवता ह्रीं बीजं हूं शक्तिः क्रीं कीलकं ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः (यह बोलकर जल छोड़ें)।

(१) ऋष्यादिन्यास—

१. भैरवऋषये नमः (शिरसि)
२. उष्णिक् छन्दसे नमः (मुखे)
३. दक्षिणकालिकादेवतायै नमः (हृदये)
४. ह्रीं बीजाय नमो (गुह्ये)
५. हूं शक्तये नमः (पादयोः)
६. क्रीं कीलकाय नमः (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

(२) करन्यास—

ॐ क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
,, क्रीं तर्जनीभ्यां नमः ।
,, क्रूं मध्यमाभ्यां नमः ।
ॐ क्रैं अनामिकाभ्यां नमः ।
,, क्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
,, करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

(३) हृदयादिन्यास—

ॐ क्रां हृदयाय नमः ।
,, क्रीं शिरसे स्वाहा ।
,, क्रूं शिखायै वषट् ।
ॐ क्रैं कवचाय हुम् ।
,, क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
,, क्रः अस्त्राय फट् ।

श्रीकालीध्यान—

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषिताम् ॥ १ ॥
सद्यश्छिन्नशिरः खड्गवामोर्ध्वाधः कराम्बुजाम् ।
अभयं वरदं चैव दक्षिणाधोर्ध्व-पाणिकाम् ॥ २ ॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बराम् ।
कण्ठावसक्तमुण्डाली-गलद्रुधिरचर्चिताम् ॥ ३ ॥
कर्णावतंसतानीत-शवयुग्म-भयानकाम् ।
घोरदंष्ट्रा-करालास्यां पीनोन्नत-पयोधराम् ॥ ४ ॥
बालार्कमण्डलाकारां लोचनत्रितयान्विताम् ।
शवानां करसङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ॥ ५ ॥
सृक्कद्वयगलद्रक्त-धाराविस्फुरिताननाम् ।
घोररूपां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ॥ ६ ॥

दन्तुरां दक्षिणाव्यापि-मुक्तलम्बकचोच्चयाम् ।
शवरूपमहादेव-हृदयोपरि संस्थिताम् ॥ ७ ॥
शिवाभिर्घोररूपाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ।
महाकालेन सार्धोर्ध्वमुपविष्टरतातुराम् ॥ ८ ॥
सुखप्रसन्नवदनां स्मेराननसरोरुहाम् ।
एवं संचिन्तये कालीं सर्वकामसमृद्धिदाम् ॥ ९ ॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार-पूजन करें ।

मन्त्र जप से पूर्व कवच का पाठ करना चाहिए जिससे जप में किसी प्रकार की कोई बाधा नहीं आती है ।

भैरवतन्त्रोक्त जगन्मङ्गल कवच

ॐ शिरो मे कालिका पातु क्रीङ्कारैकाक्षरी परा ।
क्रीं क्रीं क्रीं मे ललाटं च कालिका खड्गधारिणी ॥ १ ॥
हुं हुं पातु नेत्रयुग्मं ह्रीं ह्रीं पातु श्रुती मम ।
दक्षिणे कालिके पातु घ्राणयुग्मं महेश्वरी ॥ २ ॥
क्रीं क्रीं क्रीं रसना पातु हुं हुं पातु कपोलकम् ।
वदनं सकलं पातु ह्रीं ह्रीं स्वाहास्वरूपिणी ॥ ३ ॥
द्वात्रिंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्या सुखप्रदा ।
खड्गमुण्डधरा काली सर्वांगमभितो मम ॥ ४ ॥
क्रीं हुं ह्रीं त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदयं मम ।
ऐं हुं ॐ ऐं स्तनद्वन्द्वं ह्रीं फट् स्वाहा ककुरस्थलम् ॥ ५ ॥
अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु सकर्त्रिका ।
क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं करौ पातु षडक्षरी मम ॥ ६ ॥
क्रीं नाभिमध्यदेशं च दक्षिणे कालिकेऽवतु ।
क्रीं स्वाहा पातु पृष्ठं तु कालिका सा दशाक्षरी ॥ ७ ॥

---

१. काली देवी के अन्य भेद-भद्र-काली; महाकाली, गुह्यकाली, श्मशानकाली आदि भी हैं ।

ह्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके हुं ह्रीं पातु कटिद्वयम् ।
काली दशाक्षी विद्या स्वाहा पातूरुयुग्मकम् ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं क्रीं मे स्वाहा पातु कालिका जानुनी मम ।
काली हृन्नामविद्येयं चतुर्वर्ग—फलप्रदा ॥ ९ ॥
क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं पातु गुल्फं दक्षिणे कालिके सदा ।
क्रीं हूं स्वाहा पदं पातु चतुर्दशाक्षरी मम ॥ १० ॥
खड्गमुण्डधरा काली वरदाऽभयधारिणी ।
विद्याभिः सकलाभिः सा सर्वांगमभितोऽवतु ॥ ११ ॥
काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी ।
विप्रचिता तथोग्रोग्रप्रभादीप्ता घनत्विषा ॥ १२ ॥
नीला घना बालिका च माता मुद्रामितप्रभा ।
एताः सर्वाः खड्गधरा मुण्डमाला-विभूषिताः ।
रक्षन्तु मां दिक्षु देवी ब्राह्मी नारायणी तथा ॥ १३ ॥
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ।
वाराही नारसिंही च सर्वाश्चामित-भूषणाः ॥ १४ ॥
रक्षन्तु स्वायुधैर्दिक्षु मां विदिक्षु यथा तथा ।

मन्त्रजप के पश्चात् समयानुसार स्तोत्रपाठ करके क्षमा प्रार्थना करे ।

जपमन्त्र—(१) क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणकालिके क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(२) क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा । (वांछापूर्ति के लिए)
(३) क्रीं क्रीं क्रीं फट् स्वाहा । (मोहन-आकर्षण के लिए)
(४) ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा । (चतुर्वर्ग फलदायक)
(५) ॐ क्रीं कालिकायै नमः । (सर्वसुखप्रद्र)

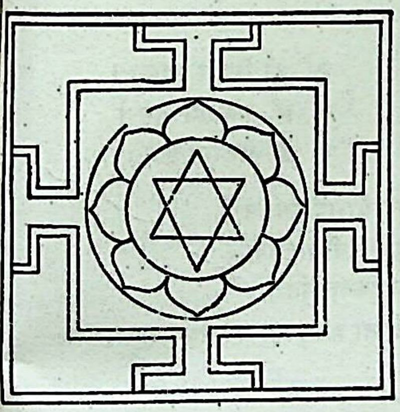
१२

तारा-यन्त्र और उपासना-विधि

भगवती तारा दवी की उपासना भारत के अनेक प्रदेशों में साधक गण रते हैं। बौद्ध सम्प्रदाय की मुख्य अधिष्ठत्री देवी भी तारा ही है। ज्ञान-ज्ञान एवं सर्वविधि सुखसम्पदा के लिए यह उपासना अति लाभप्रद है।[1]

सयोनिं चन्दनेनाष्टदलं पद्मं लिखेत् ततः।
मृद्वासनं समासाद्य मायां पूर्वदले लिखेत्॥
बीजं द्वितीयं याम्ये फट् उत्तरे पश्चिम मेतुठम्।
मध्ये बीजं लिखेत् तारं भूतशुद्धिमथाचरेत्॥

इस निर्देश के अनुसार 'तारा-यन्त्र' की रचना विधिपूर्वक करनी चाहिए। इसकी आकृति इन श्लोकों के अनुसार बनेगी। इससे पहले काली यन्त्र में कोई बीजाक्षर नहीं है; किन्तु यहाँ बीजाक्षर का निर्देश किया गया है। यदि दूसरा बिना बीजाक्षर का यन्त्र बनाना हो तो वह निम्न प्रकार से बनाएँ—



इनमें से कोई भी यन्त्र बनाकर पूजा के लिए प्रतिष्ठित करें। बाद में निम्नलिखित पद्धति से 'ॐ स्त्रीं तारायै नमः' मन्त्र बोलते हुए पूजा करके यन्त्र के समक्ष मन्त्र जप करें। इससे सब प्रकार की सुख शान्ति प्राप्त होती रहती है।

---

१. तारा देवी के अन्य भेद—एक जटा, नील सरस्वती, उग्रतारा, तारिणी आदि नामों से प्रसिद्ध हैं।

मन्त्रजप-विधान—

अस्य श्री महोग्रतारामन्त्रस्य अक्षोभ्य ऋषिः बृहतीछन्दः श्रीमहोग्रतारा-देवता हूं बीजं फट् शक्तिः ह्रीं कीलकम् ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः[1]।

(१) ऋष्यादि न्यास—

१. अक्षोभ्य ऋषये नमः (शिरसि)। २. बृहतीछन्दसे नमः। (मुखे)
३. श्री महोग्रतारायै नमः (हृदये) ४. हूं बीजाय नमः (गुह्ये)
५. फट् शक्तये नमः (पादयोः) ६. ह्रीं कीलकाय नमः। (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

करन्यास—

१. ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। २. ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः।
३. ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ४. ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः।
५. ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ६. ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि न्यास—

१. ह्रां हृदयाय नमः। २. ह्रीं शिरसे स्वाहा।
३. ह्रूं शिखायै वषट्। ४. ह्रैं कवचाय हुम्।
५. ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ६. ह्रः अस्त्राय फट्।

ध्यान—प्रत्यालीढपदार्पिताङ्घ्रिशवहृद् घोराट्टहासा परा,
खड्गेन्दीवरकर्त्रिखर्परभुजा हूङ्कारबीजोद्भवा।
खर्वा नीलविशालपिंगलजटाजूटकनागैर्युता,
जाड्यंन्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम्॥

---

१. साधकों की सुविधा के लिए हमने कालीयन्त्र की उपासना में हिन्दी में विधि का साथ-साथ उल्लेख कर दिया है, अतः यहां से आगे की क्रिया का ज्ञान वहीं से प्राप्त करें।

कवचपाठ

ॐ कारो मे शिर: पातु ब्रह्मरूपा महेश्वरी।
ह्रींकार: पातु ललाटे बीजरूपा महेश्वरी॥
स्त्रीङ्कार: पातु वदने लज्जारूपा महेश्वरी।
हूङ्कार: पातु हृदये भवानीशक्तिरूपधृक्॥
फट्कार: पातु सर्वांगे सर्वसिद्धिफलप्रदा।
नोला मां पातु देवेशी गण्डयुग्मे भयावहा।
लम्बोदरी सदा पातु कर्णयुग्मं भयावहा॥
व्याघ्रचर्मावृतकटि: पातु देवी शिवप्रिया।
पीनोन्नतस्तनी पातु पार्श्वयुग्मे महेश्वरी॥
रक्त-वर्तुलनेत्रा च कटिदेशे सदाऽवतु।
ललज्जिह्वा सदा पातु लिंगे देवी हरप्रिया।
पिंगोग्रैकजटा पातु जंघायां विघ्ननाशिनी॥
खड्गहस्ता महादेवी जानुचक्रे महेश्वरी।
नीलवर्णा सदा पातु जानुनी सर्वदा मत॥
नागकुण्डलधर्त्री च पातु पादयुगे तत:।
नागहारधरा देवी सर्वांग पातु सर्वदा।

जपमन्त्र—

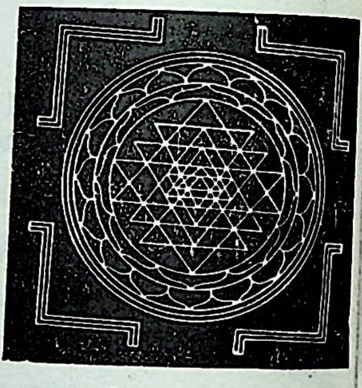
१. ॐ ह्रीं स्त्रीं हुं फट्।
२. ऐं ॐ ह्रीं क्रीं हुं फट्।

१३

षोडशी-यन्त्र और उपासना-विधि

बिन्दु-त्रिकोण-वसुकोण-दशारयुग्म—
मन्वस्रनागदल-संयुत-शोडशारम् ।
वृत्तत्रयं च धरणीसदनत्रयं च,
श्रीचक्रमेतदुदितं परदेवतायाः ॥

इस निर्देश के अनुसार षोडशी यन्त्र की रचना विधिपूर्वक करनी चाहिए । इसकी आकृति इस प्रकार बनेगी—



यह अति प्रसिद्ध यन्त्रराज है ।[1] इसकी पूजा का शास्त्रोक्त विधान भी अतिविस्तृत है । दीक्षा प्राप्त व्यक्ति प्रतिदिन आवरणपूजा करते हैं ।

सामान्य श्रद्धालु व्यक्ति यह यन्त्र बनवाकर प्रतिदिन पूजा के लिए प्रतिष्ठा करवा ले । बाद में प्रतिदिन श्रद्धा-भक्ति से पूजन करे और मन्त्रजप करे ।

---

१. यन्त्र सम्बन्धी विशेष ज्ञातव्य—

इस यन्त्र में बिन्दु, त्रिकोण तथा अष्टकोण को संहार चक्र, दो दशकोण तथा चतुर्दश कोण को स्थिति चक्र एवं अष्टदल पद्म, षोडशदल पद्म, तीन वृत्त और भूपुरत्रय को सृष्टिचक्र कहते हैं । वैसे पूरे यन्त्र के भी सृष्टि, स्थिति और संहार चक्र के रूप में स्थानभेद से पूजा विधान हैं । यह यन्त्र प्रतिदिन कुङ्कुम अथवा सिन्दूर से लिखकर पूजा करने का

इससे समस्त कष्टों का निवारण होता है। 'ॐ ह्रीं षोडश्यै नमः' इस मन्त्र से यन्त्र की पूजा करनी चाहिए। इसी का नाम महात्रिपुरसुन्दरी भी है।

भी विधान है। रेखाएँ समान और समानमुख होनी चाहिएं। पूजा में निर्दिष्ट स्थानों पर उन उन देवताओं की अर्चना होती है। इसमें बनने वाले अष्टदलों में केशर नहीं बनाने चाहिएं। यह रात्रि में नहीं लिखा जाता है।

इस यन्त्र में भूपुर के द्वार कहीं खुले और कहीं बन्द रहते हैं, जो सम्प्रदायानुसार हैं। श्री यन्त्र के अन्यान्य प्रकारों से लेखन भेद तथा मन्त्र भेद से काम्य प्रयोग भी होते हैं।

'स्वच्छन्द भैरव' में स्थण्डिल के ऊपर एक हाथ के बराबर यन्त्र बनाने का निर्देश है। रत्नों पर यह यन्त्र बनाना हो तो एक से चार तोले तक के रत्न पर बनाना उत्तम है। पर अधिक भार वाले नहीं। भूमि पर यन्त्र बनाकर उसे लाल मिट्टी से पूर्ण करके पूजा करने से इष्टसिद्धि होती है। स्वर्ण, ताम्र और चांदी इनको त्रिलोह कहते हैं। इनमें दस भाग स्वर्ण, बारह भाग ताम्र और सोलह भाग चांदी मिला कर बनाए गये यन्त्र पर अर्चा करने से सौभाग्य और सिद्धि प्राप्त होती है। प्रवाल, पद्मराग, इन्द्रनील, नीलकान्त अथवा मरकतमणि पर यन्त्र बनाकर पूजा करने से धन-धान्य समृद्धि प्राप्त होती है।

यन्त्र के विनष्ट, दग्ध, स्फुटित-खण्डित, अथवा चोर द्वारा अपहृत हो जाने पर उपवास-पूर्वक १० हजार मन्त्रजप, दशांश हवन, तर्पण, मार्जन और ब्राह्मण भोजन करके गुरु-पूजा द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिए। यन्त्र के चिन्ह लुप्त होने पर, स्फुटित अथवा भग्न होने पर उसे पवित्र गङ्गादि नदियों में विसर्जित कर देना चाहिए। यह आवश्यक है।

श्रीयन्त्र का पादोदक लेना और उसका दर्शन भी परम पुण्यप्रद है। ये ही निर्देश सभी देवताओं के यन्त्रों के बारे में भी समझने चाहिएं।

मन्त्र जप-विधान

ॐ अस्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीमहामन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिऋषिः पंक्तिश्छन्दः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवता ऐं बीजं सौः शक्तिः क्लीं कीलकं ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

(१) न्यास—

१. दक्षिणामूर्तिऋषये नमः (शिरसि)
२. पंक्तिच्छन्दसे नमः (मुखे)
३. श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः (हृदये)
४. ऐं बीजाय नमः (गुह्ये)
५. सौः शक्तये नमः (पादयो)
६. क्लीं कीलकाय नमः (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

(२) करन्यास—

१. ह्रीं श्रीं अं अंगुष्ठाभ्यां नमः
२. ,, ,, आं तर्जनीभ्यां ,,
३. ,, ,, सौः मध्यमाभ्यां ,,
४. ह्रीं श्रीं अं अनामिकाभ्यां नमः
५. ,, ,, आं कनिष्ठिकाभ्यां नमः
६. ,, ,, सौः करतलकरपृष्ठा० ,,

(३) हृदयादिन्यास—

१. ह्रीं श्रीं अं हृदयाय नमः
२. ,, ,, आं शिरसे स्वाहा
३. ,, ,, सौः शिखायै वौषट्
४. ह्रीं श्रीं अं कवचाय हुम्
५. ,, ,, आं नेत्रत्रयाय वौषट्
६. ,, ,, सौः अस्त्राय फट्

हुं क्षेमा, त्वरिता पातु सह्रीं सकली मनोभवा ।
हंसः पायान्महादेवी परं निष्फल - देवता ।।
विजया मंगला दूती कल्याणी भगमालिनी ।
ज्वाला च मालिनी नित्या सर्वदा पातु मां शिवा ।।

ध्यान—

बालार्कायुततेजसं त्रिनयनां रक्ताम्बरोल्लासिनीं,
नानालङ्कृतिराजमानवपुषं बालेन्दुयुकशेखराम् ।

हस्तैरिक्षुधनुःसृणिं सुमशरं पाशं मुदा बिभ्रतीं,
श्रीचक्रस्थितसुन्दरीं त्रिजगतामाधारभूतां भजे ॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करें।

कवच पाठ

ॐ पूर्वे मां भैरवी पातु बाला मां पातु दक्षिणे।
मालिनी पश्चिमे पातु त्रासिनी उत्तरेऽवतु ॥
ऊर्ध्वं पातु महादेवी महात्रिपुरसुन्दरी।
अधस्तात् पातु देवेशी पातालतलवासिनी ॥
आधारे वाग्भवः पातु कामराजस्तथा हृदि।
डामरः पातु मां नित्यं मस्तके सर्वकामदः ॥
ब्रह्मरन्ध्रे सर्वगात्रे छिद्रस्थाने च सर्वदा।
महाविद्या भगवती पातु मां परमेश्वरी ॥
ऐं ह्रीं ललाटे मां पातु क्लीं क्लूं सश्च नेत्रयोः।
नासायां मे कर्णयोश्च द्रीं द्रं द्रां चिबुके तथा ॥
सौः पातु गले हृदये सह ह्रीं नाभिदेशके।
कलह्रीं क्लीं स्त्रीं गुह्यदेशे स ह्रीं पादयोस्तथा ॥
सह्रीं मां सर्वतः पातु सकली पातु सन्धिषु।
जले स्थले तथाऽऽकाशे दिक्षु राजगृहे तथा ॥

जपमन्त्र—(१) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कएईल ह्रीं हसकहल ह्रीं सकल ह्रीं।

अथवा—(२) श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं कएईल ह्रीं सकल ह्रीं सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं।[1]

---

१. श्रीविद्या, पञ्चदशी, त्रिपुरा, सुन्दरी आदि नाम भी इसी देवी के हैं। श्रीविद्योपासना का विधान अतिविस्तृत है जिसका परिचय हम श्रीविद्या दर्पण नामक अपने एक स्वतंत्र ग्रन्थ में दे रहे हैं।

१४

भुवनेश्वरी यन्त्र और उपासना-विधि

पद्ममष्टदल बाह्ये वृत्तं षोडशभिर्दलैः ।
विलिखेत् कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम् ।।
चतुरस्त्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।।

इस प्रमाण के अनुसार अष्टदल पद्म उसके बाहर वृत्त फिर षोडश दल और बीच में षट्कोण बनाकर चतुरस्त्र चतुर्द्वार वाला यन्त्र बनाया जाता है। इस प्रकार यन्त्र बनाकर उसे प्रतिष्ठित करें। यदि दीक्षा प्राप्त हो सके तो प्राप्त करके नीचे बताए हुए विधान के अनुसार नित्य नियम से भगवती भुवनेश्वरी की उपासना करें। दीक्षा प्राप्त नहीं हो सके तो पहले बताई हुई विधि के अनुसार स्वयं दीक्षित होकर उपासना करें। यन्त्रराज की पूजा षोडशोपचार से करके फिर मन्त्र जप करें। इससे सब प्रकार की सुख-सम्पत्ति प्राप्त होती है तथा सभी विघ्न टल जाते हैं।

मन्त्र जप विधान—

ॐ अस्य श्रीभुवनेश्वरी महामन्त्रस्य सदाशिवऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः श्रीभुवनेश्वरी देवता ह्रीं बीजं ऐं शक्तिः श्रीं कीलकं श्रीभुवनेश्वरी देवताप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

१. सदाशिवऋषये नमः (शिरसि)
२. त्रिष्टुप्छन्दसे नमः (मुखे)
३. श्रीभुवनेश्वरी देवतायै नमः (हृदये)
४. ह्रीं बीजाय नमः (गुह्ये)
५. ऐं शक्तये नमः (पादयोः)
६. श्री कीलकाय नमः (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)।

२. करन्यास—

१. ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
२. ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः।
३. ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः।
४. ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः।
५. ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
६. ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

३. हृदयादिन्यास—

१. ह्रां हृदयाय नमः
२. ह्रीं शिरसे स्वाहा ।
३. ह्रूं शिखायै वषट्
४. ह्रैं कवचाय हुम् ।
५. ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
६. ह्रः अस्त्राय फट् ।

अथवा 'ऐं ह्रीं श्रीं' इन तीनों बीजों की आवृत्ति करके प्रत्येक बीज से करन्यास तथा हृदयादि न्यास करें ।

श्रीभुवनेश्वरी ध्यान—

उद्यदिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुंगकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ॥

अथवा

भजे भुवनसुन्दरीमरुणनीलशुभ्राननां,
त्रयां त्रिनयनाम्बुजां धृतवरत्रिशुलाङ्कुशाम् ।
सुपाशडमरूकरामभयदां सरोजस्थितां,
स्मितां शशिधरां वरामरुणवस्त्रभूषोज्ज्वलाम् ॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करें फिर कवच का पाठ करें—

कवच पाठ

ह्रीं बीजं मे शिरः पातु भुवनेशी ललाटकम् ।
ऐं पातु दक्षनेत्रं मे ह्री पातु वामलोचनम् ॥
श्रीं पातु दक्षकर्णं मे त्रिवर्णात्मा महेश्वरी ।
वामकर्णं सदा पातु ऐं घ्राणं पातु मे सदा ॥
ह्रीं पातु वदनं देवी ऐं पातु रसनां मम ।
श्रीं स्कन्धौ पातु नियतं ह्रीं भुजौ पातु सर्वदा ॥
क्लीं करौ त्रिपुरेशानी त्रिपुरैश्वर्यदायिनी ॥
ॐ पातु हृदयं ह्रीं मे मध्यदेशं सदाऽवतु ।
क्रीं पातु नाभिदेशं सा त्र्यक्षरी भुवनेश्वरी ॥
सर्वबीजप्रदा पृष्ठं पातु सर्वशङ्करी ।
ह्रीं पातु गुदे शं मे नमो भगवती कटिम् ॥

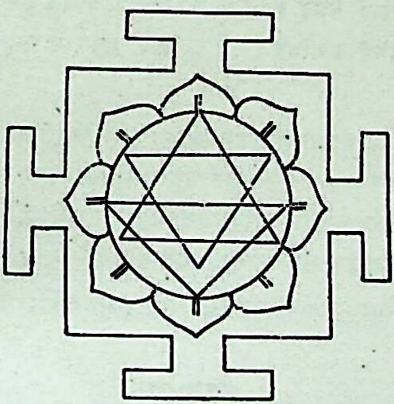
माहेश्वरी सदा पातु सक्थिनी जानुयुग्मकम् ।
अन्नपूर्णा सदा पातु स्वाहा पातु पदद्वयम् ॥
सप्तदशाक्षरी पायादन्नपूर्णात्मिका परा ।
तारं माया रमा कामः षोडशार्णा ततः परम् ॥
शिरस्स्था सर्वदा पातु विंशत्यर्णात्मिका परा ।
तारदुर्गे युगं रक्षिणी स्वाहेति दशाक्षरी ॥
जयदुर्गा घनश्यामा पातु मां पूर्वतो मुदा ।
मायाबीजादिका चैषा दशार्णा च परा तथा ॥
उत्तप्तकाञ्चनाभासा जयदुर्गाननेऽवतु ।
तारं ह्रीं दुं दुर्गायै नमोऽष्टार्णात्मिका परा ॥
शङ्खचक्रधनुर्बाणधरा मां दक्षिणेऽवतु ।
महिषामर्दिनी स्वाहा वसुवर्णात्मिका परा ।
नैर्ऋत्यां सर्वदा पातु महिषासुरनाशिनी ॥
माया पद्मावती स्वाहा सप्तार्णा परिकीर्तिता ।
पद्मावती पद्मसंस्था पश्चिमे मां सदावतु ।
पाशाङ्कुशपुटा माये ह्रि परमेश्वरि स्वाहा ॥
त्रयोदशार्णा ताराद्या अश्वारूढाननेवतु ।
सरस्वती पंचशरे नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥
स्वाहा रव्यक्षरी विद्या मामुत्तरे सदावतु ।
तारं माया तु कवचं खं रक्षेत् सदा वधूः ॥
हूं क्षे फट् महाविद्या द्वादशार्णाखिलप्रदा ।
त्वरिताष्टाहिभिः पायाच्छिवकोणे सदा च माम्
ऐं क्लीं सौः सा ततो बाला मामूर्ध्वदेशतोऽवतु ।
बिन्द्वन्ता भैरवी बाला भूमौ च मां सदावतु ॥

जपमन्त्र—१. ऐं ह्रीं श्रीं । अथवा २. ह्री ।

१५
भैरवी-यन्त्र और उपासना-विधि

पद्मष्टदलोपेतं नवयोन्याढ्यकर्णिकम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं भूगृहं विलिखेत्ततः ।।

इस निर्देश के अनुसार श्री भैरवी का यन्त्र अष्टदल पद्म, तीन त्रिकोणों द्वारा निर्मित नव योन्यात्मक तथा चतुर्द्वारवाले भूगृह से युक्त बनता है। कहीं-कहीं नौ त्रिकोणों से भी यह यन्त्र बनाया जाता है। इस यन्त्र को शुभ मूहूर्त में तैयार करके प्रतिष्ठित कर लें और बाद में दीक्षित होकर विधि-विधान से नित्य-पूजन करके भगवती भैरवी की कृपा प्राप्त करने के लिए मन्त्र जप करें। इससे सब कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है।



मन्त्रजप-विधान

ॐ अस्य श्रीत्रिपुरभैरवीमन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः

त्रिपुरभैरवीदेवता वाग्भवो बीजं शक्ति बीजं शक्तिः कामराज कीलकं श्रीत्रिपुर-भैरवी प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

(१) ऋष्यादि न्यास—

१. दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः (शिरसि)
२. पंक्तिच्छन्दसे नमः (मुखे) ३. श्रीत्रिपुरभैरवीदेवतायै नमः (हृदये)
४. वाग्भवबीजाय नमः (गुह्ये) ५. शक्तिबीजशक्तये नमः (पादयो)
६. कामराजकीलकाय नमः (नांभौ) ७. विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)

(३) करन्यास—

१. ह्स्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः २. ह्स्रीं तर्जनीभ्यां नमः ।
३. ह्स्रूं मध्यमाभ्यां नमः । ४. ह्स्रैं अनामिकाभ्यां नमः ।
५. ह्स्रौं कनिष्ठिकाभ्यां । ६. ह्स्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

(२) हृदयादिन्यास—

१. ह्स्रां हृदयाय नमः । २. ह्स्रीं शिरसे स्वाहा ।
३. ह्स्रूं शिखायै वषट् । ४. ह्स्रैं कवचाय हुम् ।
५. ह्स्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ६. ह्स्रः अस्त्राय फट् ।

ध्यान—

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां,
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटी विद्यामभीतिं परम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं,
देवी बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे समन्दस्मिताम् ॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करें । तदनन्तर कवच पाठ करें ।

कवच पाठ

ह्स्रां मेङ्शिरः पातु भैरवी भयनाशिनी ।
सकलरीं नेत्रं च ह्स्रांश्चैव ललाटकम् ॥

कुमारी सर्वगात्रे च वाराही उत्तरे तथा।
पूर्वे च वैष्णवी देवी इन्द्राणी मम दक्षिणे ॥
दिग्विदिक्षु च सर्वत्र भैरवी सर्वदाऽवतु ॥[1]

जप-मन्त्र 'ह्स्रीं सकलह्स्रीं ह्स्रौः' इस मन्त्र का जप करें।

अथवा—'ॐ ह्स्री त्रिपुरभैरव्यै नमः इसका जप करें। इस मन्त्र का पुरश्चरण दस लाख जप करने से पूर्ण होता है। पुरश्चरण के अन्त में फ्लाश (खांखरे) के पुष्प और घृत की दशांश आहुति देवें। अन्य तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मण-भोजनादि भी क्रमशः अवतरण क्रम से दशांशों में पूर्ण करें।

यदि दस लाख जप न हो सकें तो एक लाख जप करें और फिर दशांश हवन, लाल कमलों द्वारा करें। इससे भगवती साधक के मनोरथों को पूर्ण करती है। धन-धान्य और यश प्रदान करती है।

---

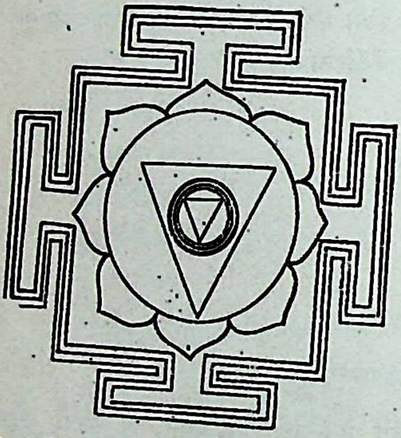
१. भैरवी को ही त्रिपुरा कहते हैं। इसके १. बाला, २. भैरवी और ३. सुन्दरी ऐसे तीन प्रकार हैं। 'ज्ञानार्णव' में इसी को 'त्रिशक्ति' कहा है। प्रपंचसार वाराहीतन्त्र और शारदातिलक में 'त्रिपुरा' पद की विशेष व्याख्या दी है।

श्रीत्रिपुरभैरवी का 'शाक्त-प्रमोद' में दिया हुआ कवच बहुत बड़ा है। उसमें मन्त्राक्षर तथा अन्य देवियों के नामों का भी उल्लेख है। अतः यहाँ यह संक्षिप्त पाठ दिया है। विस्तार वहीं देखें।

१६

छिन्नमस्ता-यन्त्र और उपासना

त्रिकोणं विन्यसेदादौ तन्मध्ये मण्डलत्रयम् ।
तन्मध्ये विन्यसेद् योनिं द्वारत्रयसमन्विताम् ॥
बहिरष्टदलं पद्मं भूबिम्बत्रितयं पुनः ।



इसके अनुसार त्रिकोण, तीन वृत्त, मध्य में तीन वृत्त, बाहर अष्टदल और अन्त में त्रिरेखात्मक भूपुर से युक्त छिन्नमस्ता देवी का यन्त्र बनाया जाता है। छिन्नमस्ता देवी "प्रचण्डचण्डिका" के नाम से भी प्रसिद्ध है। पुत्र-प्राप्ति, दारिद्र्य का नाश तथा कवित्व की प्राप्ति के लिए इस देवी की उपासना की जाती है। विश्वसारतन्त्र और रुद्रयामल में इनकी उपासना का विस्तृत विधान बताया गया है। संक्षिप्त साधना-प्रकार यहां दिया जा रहा है।[1]

---

१. सम्पत्प्रदा, कौलेश, सकल सिद्धिदा, भण्डासुरविध्वंसिनी, कामेश्वरी, षट्कूटा, नित्या और भुवनेश्वरी भैरवी आदि इसके भेद हैं और इसकी मन्त्रभेद से साधना की जाती है।

मन्त्र जप-विधान

विनियोग—ॐ अस्य श्रीछिन्नमस्तामहामन्त्रस्य भैरवऋषिः सम्राट् छन्दः छिन्नमस्ता देवता हुं हुं बीजं स्वाहा शक्तिः क्लीं कीलकं ममाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

(१) ऋष्यादि न्यास

१. भैरवऋषये नमः (शिरसि)
२. सम्राट्छन्दसे नमः (मुखे)
३. छिन्नमस्तादेवतायै नमः (हृदये)
४. हुं हुं बीजाय नमः (गुह्ये)
५. स्वाहा शक्तये नमः (पादयोः)
६. क्लीं कीलकाय नमः (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

(२) करन्यास

छ्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः
छ्रीं तर्जनीभ्यां नमः ।
छ्रूं मध्यमाभ्यां नमः ।
छ्रैं अनामिकाभ्यां नमः ।
छ्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
छ्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

(३) हृदयादिन्यास

छ्रां हृदयाय नमः ।
छ्रीं शिरसे स्वाहा ।
छ्रूं शिखायै वषट् ।
छ्रैं कवचाय हुम् ।
छ्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
छ्रः अस्त्राय फट् ।

श्रीछिन्नमस्ता ध्यान

अनोग्रे स्वशरीरस्य नाभिनीरजसंगताम् ।
निर्लेपां निर्गुणां सूक्ष्मां बालचन्द्रसमप्रभाम् ॥
समाधिमात्रगम्यां तु गुणत्रितयवेष्टिताम् ।
कलातीतां गुणातीतमुक्तिमात्रप्रदायिनीम् ॥
छिन्नमस्तां भजे देवीं सर्वसौख्यप्रदायिनीम् ।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करें तथा नीचे लिखे अनुसार कवच का पाठ करके जप करें ।

कवच-पाठ

हुं बीजात्मिका देवी मुण्डकात्रधरा परा।
हृदयं पातु सा देवी वर्णिनी डाकिनी युता॥
श्रीं ह्रीं हुं ऐं चैव देवी पूर्वस्यां पातु सर्वदा।
सर्वांगं मे सदा पातु छिन्नमस्ता महाबला॥
वज्रवैरोचनीय हुं फट् बीजसमन्विता।
उत्तरस्यां तथाग्नां च वारुणं नैर्ऋतेऽवतु॥
इन्द्राक्षी भैरवी चैव सितांगी च संहारिणी।
सर्वदा पातु मां देवी चान्यान्यासु हि दिक्षु वै॥

जप मन्त्र

श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये हुं हुं फट् स्वाहा।

इस मन्त्र का एक लाख जप करने से पुरश्चरण होता है। जप के पश्चात् दशांश हवन करना चाहिए। हवन में लाल रंग के पुष्प तथा घृत का उपयोग करना आवश्यक है। प्रतिदिन जप के बाद में देवी के लिए खीर, सूखा मेवा नैवेद्य में रखना चाहिए तथा नीचे लिखा मन्त्र बोलकर भोग लगाना चाहिए।

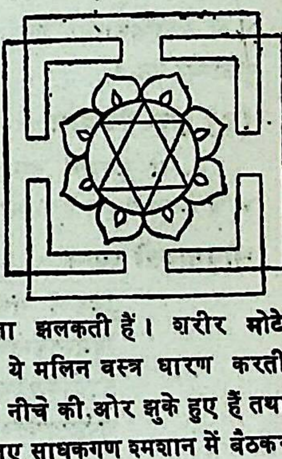
नैवेद्य मन्त्र

ॐ सिद्धिप्रदे वर्णनीये सर्वसिद्धिप्रदे डाकिनीये
छिन्नमस्ते देवि एहि एहि इमं बलिं गृह्ण गृह्ण
मम सिद्धिं कुरु कुरु हूं हूं फट् स्वाहा।

१७

धूमावती-यन्त्र और उपासना-विधि

अनुक्तकल्पे यन्त्रं तु लिखेत् पद्मदलाष्टकम् ।
षट्कोण-कर्णिक तत्र वेदद्वारोपशोभितम् ।।



इसके अनुसार अष्टदल कमल और षट्कोण से युक्त भूपुरवाला यन्त्र बनाने का विधान है; किन्तु सम्प्रदाय परम्परा की दृष्टि से धूमावती का यन्त्र एक अधोमुख त्रिकोण तथा एक ऊर्ध्वमुख त्रिकोण से बनता है। यह अष्टदल कमल में छः कोणों से युक्त हो जाता है। धूमावती देवी की उपासना रात्रि के समय होती है। इस देवी का स्वरूप विचित्र है, अंग से चंचलता झलकती हैं। शरीर मोटे आकार का और क्रोधपूर्ण दृष्टि से युक्त है। ये मलिन वस्त्र धारण करती हैं, केश सूखे-रूखे हैं; स्तन वृद्धावस्था के कारण नीचे की ओर झुके हुए हैं तथा विधवा जैसा स्वरूप है। अधिक उग्र सिद्धि के लिए साधकगण श्मशान में बैठकर नग्न होकर या एकान्त स्थान में भी जप करते हैं।

मन्त्रजप विधान

ॐ अस्य श्री धूमावती महामन्त्रस्य पिप्पलादऋषिः त्रिवृत् छन्दः श्री ज्येष्ठा धूमावती देवी धूं बीजं स्वाहा शक्तिः धें कीलकं ममाभीष्ट सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

(१) ऋष्यादिन्यास

१. पिप्पलाद ऋषये नमः (शिरसि)
२. त्रिवृत् छन्दसे नमः (मुखे)
३. श्रीज्येष्ठा धूमावती देवतायै नमः (हृदये)
४. धूं बीजाय नमः (गुह्ये)
५. स्वाहा शक्तये नमः (पादयोः)
६. धूं कीलकाय नमः (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

(२) करन्यास

१. धां अंगुष्ठाभ्यां नमः २. धीं तर्जनीभ्यां नमः। ३. धूं मध्यमाभ्यां नमः। ४. धैं अनामिकाभ्यां नमः. ५. धौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ६. धः करतलकर-पृष्ठाभ्यां नमः।

(३) हृदयादिन्यास—

१. धां हृदयाय नमः। २. धीं शिरसे स्वाहा। ३. धूं शिखायै वषट्। ४. धैं कवचाय हुम्। ५. धौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ६. धः अस्त्राय फट्।

श्रीधूमावती ध्यान—

विवर्णा चंचला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा।
विमुक्तकुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा॥
,काकध्वजरथारूढा विलम्बित-पयोधरा।
शूर्पहस्तातिरूक्षाक्षा धूमहस्ता वरान्विता॥
प्रवृद्धघोणा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं भयदा कलहास्पदा॥

इस प्रकार ध्यान करके मानस पूजा करें और तदनन्तर निम्नलिखि[त] कवच का पाठ करें।

कवच-पाठ

ॐ धूं बीजं मे शिरः पातु धूं ललाटं सदाऽवतु।
धूमा नेत्रयुगं पातु वती कर्णौ सदाऽवतु॥

दीर्घा तूदरमध्ये तु नाभि मे मलिनाम्बरा ।
शूर्पहस्ता पातु गुह्यं रूक्षा रक्षतु जानुनी ॥
मुखं मे पातु भीमाख्या स्वाहा रक्षतु नासिकाम् ।
सर्वा विद्याऽवतु कण्ठं विवर्णा बाहुयुग्मकम् ॥
चंचला हृदयं पातु दुष्टा पार्श्वं सदाऽवतु ।
धूमहस्ता सदा पातु पादौ पातु भयावहा ।
प्रवृद्धरोमा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा ॥
क्षुत्पिपसार्दिता देवी भयदा कलहप्रिया ।
सर्वांगे पातु मे देवी सर्वशत्रुविनाशिनी ॥

इस प्रकार पाठ करके निम्नलिखित मन्त्र का जप करें ।

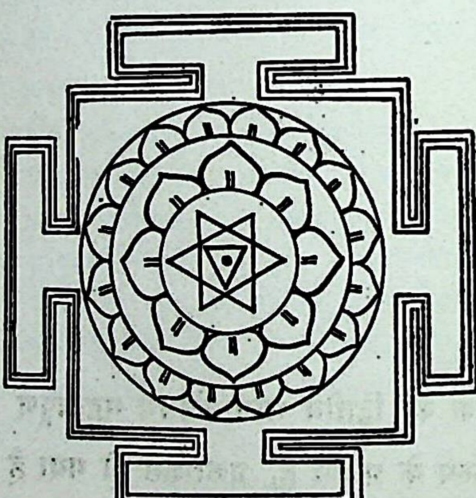
१. धूं धूं धूमावती ठः ठः ।

१८

बगलामुखी-यन्त्र और उपासना-विधि

बिन्दुत्रिकोणषट्कोणवृत्ताष्टदलमेव च ।
वृत्तं च षोडशदलं यन्त्रं च भूपुरात्मकम् ॥

इस निर्देश के अनुसार श्रीबगलामुखी देवी का यन्त्र बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त, षोडशदल तथा भूपुर से बनता है । जो इस प्रकार है—



इस यन्त्र को शुभ मुहूर्त में भोजपत्र अथवा सुवर्ण पत्र पर बनवा कर विधिपूर्वक प्रतिष्ठा करके नित्य पूजा करनी चाहिए । "ॐ ह्लीं बगलामुख्यै नमः" इस मन्त्र से नित्य पूजा करे । फिर स्थिरासन होकर मन्त्र का जप करे ।

मन्त्रजप विधान—ॐ अस्य श्रीबगलामुखीमहामन्त्रस्य नारद ऋषि: त्रिष्टुप् छन्द: श्रीबगलामुखीदेवता ह्लीं बीजं स्वाहा शक्ति: ह्ल्रीं कीलकं मम श्रीबगलामुखी प्रीत्यर्थे जपे विनियोग: ।

(१) ऋष्यादिन्यास—१. नारद ऋषये नम: (शिरसि) २. त्रिष्टुप्-छन्दसे नम: (मुखे)

३. श्रीबगलामुखीदेवतायै नम: (हृदये), ४. ह्लीं बीजाय नम: (गुह्ये)

५. स्वाहा शक्तये नम: (पादयो:) ६. ह्ल्रीं कीलकाय नम: (नाभौ)

७. विनियोगाय नम. (सर्वांगे)

(२) करन्यास—

१. ॐ ह्लीं अंगुष्ठाभ्यां नम: २. बगलामुखी तर्जनीभ्यां नम: ।

३. सर्वदुष्टानां मध्यमाभ्यां नम: । ४. वाचं मुखं पदं स्तम्भय अना०

५. जिह्वां कीलय कीलय कनिष्ठिकाभ्यां नम: ६. बुद्धिं नाशय ह्लीं ॐ करतलकरपृष्ठाभ्यां नम:

(३) हृदयादिन्यास—

१. ॐ ह्लीं हृदयाय नम: । २. बगलामुखी शिरसे स्वाहा ।

३. सर्वदुष्टानां शिखायै वषट् । ४. वाचं मुखं पदं स्तम्भय कवचाय०

५. जिह्वां कीलय कीलय नेत्रत्रयाय वौषट् । ६. बुद्धिं नाशय ह्लीं स्वाहा—अस्त्राय फट् ।

श्रीबगलामुखी ध्यान—

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदी-
सिंहासनोपरिगतां पविपांतवर्णम् ।
पीताम्बराभरणमाल्यविभूषितांगीं
देवीं नमामि घृतमुद्‌गरवैरिजिह्वाम् ॥

जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् ।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करे तथा नीचे लिखे अनुसार शक्तिपूर्वक कवच का पाठ करे।

कवच-पाठ

शिरो मे पातु ॐ ह्लीं ऐं श्री क्लीं पातु ललाटकम् ।
सम्बोधनपद पातु नेत्रे श्री बगलानने ॥
श्रुती मम रिपून् पातु नासिकां नाशयद्वयम् ।
पातु गण्डौ सदा मामैश्वर्याण्यन्तन्तु मस्तकम् ॥
देहिद्वन्द्वं सदा जिह्वा पातु शीघ्रं वचो मम ।
कण्ठदेशं स नः पातु वांछितं बाहुमूलकम् ॥
कार्यं साधयद्वन्द्वं तु करौ पातु सदा मम ।
मामातूक्ता तथा स्वाहा हृदयं पातु सर्वदा ।
अष्टाधिकचत्वारिंशद् दण्डाढ्या बगलामुखी ।
रक्षा करोतु सर्वत्र गृहेऽरण्ये सदा मम ।
ब्रह्मास्त्राख्यो मनुः पातु सर्वांगे सर्वसन्धिषु ।
मन्त्रराजः सदा रक्षा करोतु मम सर्वदा ।
ॐ ह्लीं पातु नाभिदेशं कटिं मे बगलाऽवतु ।
मुखी वर्णद्वयं पातु लिंगं मे मुष्कयुग्मकम् ।
जानुनी सर्वदुष्टानां पातु मे वर्णपंचकम् ।
वाचं मुखं तथा पादं षड्वर्णा परमेश्वरी ।
जंघायुग्मे सदा पातु बगला रिपुमोहिनी ।
स्तम्भयेति पदं पृष्ठं पातु वर्णत्रयं मम ।
जिह्वा वर्णद्वयं पातु गुल्फौ मे कीलयेति च ।
पादोर्ध्वं सर्वदा पातु बुद्धि पादतले मम ॥
विनाशय पदं पातु पादांगुल्योर्नखानि मे ।
ह्लीं बीजं सर्वदा पातु बुद्धीन्द्रियवचांसि मे ।
सर्वांगं प्रणवः पातु स्वाहा रोमाणि मेऽवतु ।
ब्राह्मी पूर्वदले पातु चाग्नेय्यां विष्णुवल्लभा ।
माहेशी दक्षिणे पातु चामुण्डा राक्षसेऽवतु ।

कौमारी पश्चिमे पातु वायव्ये चापराजिता ।

वाराही चोत्तरे पातु नारसिंही शिवेऽवतु
ऊर्ध्वंम्पातु महालक्ष्मी: पाताले शारदाऽवतु ॥

इत्यष्टौ शक्तय: पान्तु सायुधाश्च सवाहनाः ।

राजद्वारे महादुर्गे पातु मां गणनायक: ।
श्मशाने जलमध्ये च भैरवश्च सदाऽवतु ॥

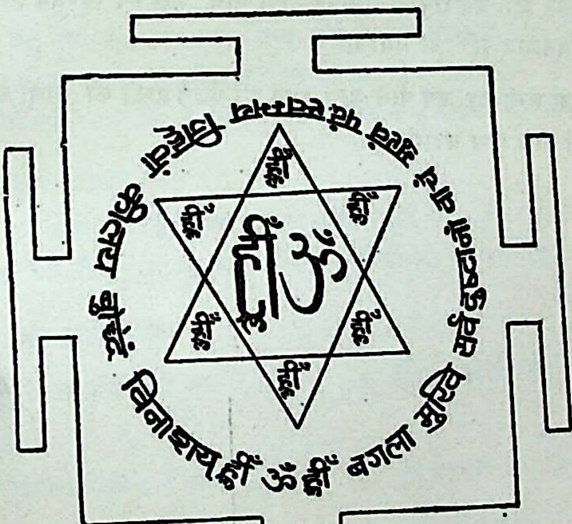
द्विभुजा रक्तवसना: सर्वाभरणभूषिता: ।
योगिन्य: सर्वदा पान्तु महारण्ये सदा मम ॥

जपमन्त्र—(१) ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं नाशय ह्लीं ॐ स्वाहा ।

अथवा

श्रीबगलामुखी का अन्य यन्त्र—

दस महाविद्याओं में प्रसिद्ध भगवती बगला की उपासना वैसे तो सभी



प्रकार के कर्मों के लिए की जाती है; किन्तु विशेष करके मुकदमे आदि वाद-विवाद में विजय तथा शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिए यह उपासना अद्वितीय है। श्रीबगलाजी का यन्त्र प्रतिष्ठित करके नित्य पूजा करने और प्रतिष्ठित यन्त्र को धारण करने से संकल्पित कार्य में शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है।

मध्ये सुधाब्धि-मणिमण्डितरत्नवेद्यां,
सिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम्।
पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीं,
देवीं भजामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ॥

इस पद्य से ध्यान करके मानसोपचार पूजन करें, फिर जप करें।

मन्त्र इस प्रकार है—

"ॐ ह्लीं बगलामुखि ! सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ नमः ॥

इस मन्त्र का जप पीले वस्त्र पहन कर पीली हल्दी की माला से करें और पूजा में पीले पुष्प चढ़ाएं।

१९

मातंगी-यन्त्र और उपासना-विधि

षट्कोणाष्टदलं पद्मं लिखेद् यन्त्रं मनोरमम् ।
भूपुरेणापि संयुक्तं मातङ्गी-प्रीतिवर्धकम् ॥

इस निर्देश के अनुसार श्री मातंगीदेवी का यन्त्र षट्कोण, अष्टदल कमल तथा भूपुर से बनता है । मातंगी देवी वाक्सिद्धि देने वाली है तथा संगीत की भी यही अधिष्ठात्री है ।

यह यन्त्र भोजपत्र अथवा अन्य धातु के पत्र पर शुभ मुहूर्त में बनवा कर प्रतिष्ठा करें । जप से पूर्व प्रतिदिन इसकी पूजा आवश्यक है । 'ॐ ह्रीं मातंग्यै नमः' इस मन्त्र से पूजा करके स्थिरासन से बैठकर मन्त्रजप करें ।

मन्त्रजप-विधान

ॐ अस्य श्रीमातंगी महामन्त्रस्य दक्षिणामूर्ति ऋषिः विराट् छन्दः श्रीमातंगी देवता ह्रीं बीजं हूं शक्तिः क्लीं कीलकम् श्रीमातंगी प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

१. ऋष्यादिन्यास —

१. दक्षिणामूर्तिऋषये नमः (शिरसि) ।
२. विराट्छन्दसे नमः (मुखे)
३. श्रीमातंगीदेवतायै नमः (हृदये)
४. ह्रीं बीजाय नमः (गुह्ये)
५. हूं शक्तये नमः (पादयोः)
६. क्लीं कीलकाय नमः (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

२. करन्यास

१. ह्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
२. ह्लीं तर्जनीभ्यां नमः ।
३. ह्लूं मध्यमाभ्यां नमः ।
४. ह्लैं अनामिकाभ्यां नमः ।
५. ह्लौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
६. ह्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

३. हृदयादिन्यास

१. ह्लां हृदयाय नमः ।
२. ह्लीं शिरसे स्वाहा ।
३. ह्लें शिखायै वषट् ।
४. ह्लैं कवचाय हुम् ।
५. ह्लौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
६. ह्लः अस्त्राय फट् ॥

श्रीमातङ्गी ध्यान

माणिक्यवीणामुपलालयन्तीं, मदालसां मञ्जुलवाग्विलासाम् ।
महेन्द्रनीलद्युतिकोमलांगीं, मातंगकन्यां मनसा स्मरामि ॥

इस प्रकार ध्यान करके सुगन्धित पुष्प-धूपादि से यन्त्र में अथवा चित्र में माता मातंगी की पूजा करे तथा स्थिरासन से कवच का पाठ करे—

कवच-पाठ

ॐ शिरो मातंगिनी पातु भुवनेशी तु चक्षुषी ।
तोडला कर्णयुगलं त्रिपुरा वदनं मम ॥
पातु कण्ठे महामाया हृदि माहेश्वरी तथा ।
त्रिपुष्पा पार्श्वयोः पातु गुदे कामेश्वरी मम ॥
ऊरुद्वये तथा चण्डी जङ्घयोश्च हरप्रिया ।
महामाया पादयुग्मे सर्वांगेषु कुलेश्वरी ॥
अंग प्रत्यंगकं चैव सदा रक्षतु वैष्णवी ।
ब्रह्मरन्ध्रे सदा रक्षेन्मातंगी नाम संस्थिता ॥
ललाटे रक्षयेन्नित्यं महापिशाचिनीति च ।
नेत्राभ्यां सुमुखी रक्षेद् देवी रक्षतु नासिकाम् ।

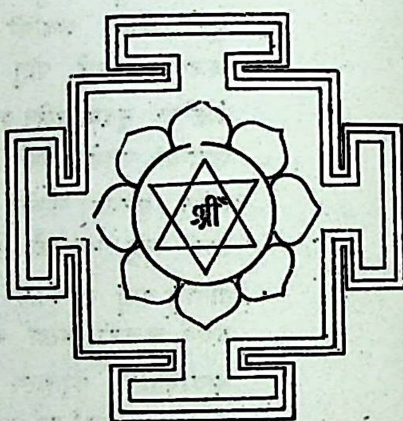
महापिशाचिनी पायान्मुखे रक्षतु सर्व्वदा ।
लज्जा रक्षतु मां दन्ते चौष्ठौ सम्मार्जनीकरी ॥
चिबुके कण्ठदेशे तु चकारत्रितयं पुनः ॥
सविसर्गं महादेवी हृदयं पातु सर्वदा ।
नाभिं रक्षतु मां लोला कालिकावतु लोचने ।
उदरे पातु चामुण्डा लिंगे कात्यायनी तथा ॥
उग्रतारा गुदे पातु पादौ रक्षतु चाम्बिका ।
भुजौ रक्षतु शर्वाणी हृदयं चण्डभूषणा ॥
विजया दक्षिणे पातु मेधा रक्षतु वारुणे ॥
नैर्ऋत्यां सुदया रक्षेद वायव्यां पातु लक्ष्मणा ।
ऐशान्यां रक्षयेद् देवी मातंगी शुभंकारिणी ॥
रक्षेत् सुरेशा चाग्नेयें बगला पातु चोत्तरे ।
ऊर्ध्वं पातु महादेवी देवानां हितकारिणी ॥
पाताले पातु मां नित्यं वशिनी विश्वरूपिणी ।
प्रणवं च ततो माया कामबीजं च कूर्चकम् ॥
मातंगिनी ङेयुतास्त्रं वह्निजायावधिर्मनुः ।
साद्धैकादशवर्णा सा सर्वत्र पातु मां सदा ॥

जप मन्त्र—ॐ ह्रीं क्लीं हूं मातङ्ग्यै फट् स्वाहा ।

२०

महालक्ष्मी-यन्त्र और उपासना-विधि

षट्कोणे वसुपत्रं च कमलं भूपुरान्वितम् ।
सम्प्रोक्तं कमलायन्त्रं श्रीबीजेन समन्वितम् ॥



इस निर्देश के अनुसार श्रीबीज से युक्त षट्कोण, अष्टदल कमल और भूपुर से यह यन्त्र बनाया जाता है।

यह यन्त्र शुभ मुहूर्त में बनाकर प्रतिष्ठा करे और बाद में 'ॐ श्रीं महालक्ष्म्यै नमः' इस मन्त्र से पूजा करे। धूप-दीप करके यन्त्र के समक्ष स्थिरासन में बैठकर मन्त्र जप करे।

मन्त्रजप विधान

विनियोग—ॐ अस्य श्रीमहालक्ष्मीमन्त्रस्य भृगुऋषिः निचृच्छन्दः श्रीमहालक्ष्मीर्देवता श्रीं बीजं ह्रीं शक्तिः ऐं कीलकं श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

(१) ऋष्यादिन्यास—

१. भृगुऋषये नमः (शिरसि) ।   २. निचृच्छन्दसे नमः (मुखे)

३. श्रीमहालक्ष्मीदेवतायै नमः (हृदये) ४. श्रीं बीजाय नमः (गुह्ये)
५. ह्रीं शक्तये नमः (पादयोः) ६. ऐं कीलकाय नमः (नाभौ)
७. विनियोगाय नमः (सर्वांगे)

(२) करन्यास

१. श्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। २. श्रीं तर्जनीभ्यां नमः।
३. श्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ४. श्रैं अनामिकाभ्यां नमः।
५. श्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ६. श्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

(३) हृदयादिन्यास—

१. श्रां हृदयाय नमः। २. श्रीं शिरसे स्वाहा।
३. श्रूं शिखायै वषट्। ४. श्रैं कवचाय हुम्।
५. श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ६. श्रः अस्त्राय फट्।

श्रीमहालक्ष्मी ध्यान—

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम्।
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां,
क्षौमाबद्धनितम्बबिम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करें। तदनन्तर निम्नलिखित कवच-पाठ करें।

श्रीमहालक्ष्मी कवच पाठः

ऐंकारो मस्तके पातु वाग्भवी सर्वसिद्धिदा।
ह्रीं पातु चक्षुषोर्मध्ये चक्षुयुग्मे च शांकरी॥
जिह्वायां मुखवृत्ते च कर्णयोर्दन्तयोर्नसि।
ओष्ठाधरे दन्तपङ्क्तौ तालुमूले हनौ पुनः॥
पातु मां विष्णुवनिता लक्ष्मीः श्रीविष्णुरूपिणी।
कर्णयुग्मे भुजद्वन्द्वे स्तनद्वन्द्वे च पार्वती॥

हृदये मणिबन्धे च ग्रीवायां पार्श्वयोः पुनः ।
पृष्ठदेशे तथा गुह्ये वामे च दक्षिणे तथा ॥
उपस्थे च नितम्बे च नाभौ जंघाद्वये पुनः ।
जानुचक्रे पदद्वन्द्वे घुटिकेऽङ्गुलिमूलके ॥
स्वधातु-प्राणशक्त्यात्मसीमन्ते मस्तके पुनः ।
विजया पातु भवने जया पातु सदा मम ॥
सर्वांगे पातु कामेशी महादेवी सरस्वती ।
तुष्टिः पातु महामाया उत्कृष्टिः सर्वदाऽवतु ॥
ऋद्धिः पातु महादेवी सर्वत्र शम्भुवल्लभा ।
वाग्भवी सर्वदा पातु पातु मां हरगेहिनी ॥
रमा पातु सदा देवी पातु माया स्वराट् स्वयम् ।
सर्वांगे पातु मां लक्ष्मीर्विष्णुमाया सुरेश्वरी ॥
शिवदूती सदा पातु सुन्दरी पातु सर्वदा ।
भैरवी पातु सर्वत्र भेरुण्डा सर्व्वदाऽवतु ।
त्वरिता पातु मां नित्यमुग्रतारा सदाऽवतु ।
पातु मां कालिका नित्यं कालरात्रिः सदाऽवतु ॥
नवदुर्गा सदा पातु कामाक्षी सर्वदाऽवतु ।
योगिन्यः सर्वदा पान्तु मुद्राः पान्तु सदा मम ॥
मात्राः पान्तु सदा देव्यश्चक्रस्था योगिनीगणाः ।
सर्वत्र सर्वकामेषु सर्वकर्मसु सर्वदा ।
पातु मां देवदेवी च लक्ष्मीः सर्वसमृद्धिदा ॥

जप मन्त्र—(१) ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्सौः जगत्प्रसूत्यै नमः ।
(२) श्रीं ।

—★—

रुद्रयामल-तन्त्र

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

तन्त्रसाहित्य के विशाल सागर में अद्भुत रत्न के समान अपनी महानता और तान्त्रिक प्रयोगों के लिए सर्वत्र विख्यात ग्रन्थ है । तन्त्र का कोई भी ग्रंथ ऐसा नही मिलेगा जिसमें रुद्रयामल का प्रमाण के रूप में उद्धरण नहीं लिया गया हो । भगवान शिव और भगवती पार्वती के संलाप के रूप में उनके ही साधना-मार्ग को प्रकाशित करने वाला यह ग्रन्थ अत्यन्त प्रमाणिक और सर्वोपरि माना गया है ।

वर्षों के परिश्रम के बाद लेखक ने इसका यह सार-संग्रह रूप संस्करण तैयार किया है । इसमें सर्व साधारण पाठकों की रुचि और आवश्यकता को ध्यान में रखकर ऐसा उत्तम विवेचन प्रस्तुत किया गया है कि साधना के पथ पर चलनेवाले को कोई कठिनाई न हो और कोई विषय छूटे भी नहीं । तान्त्रिक संकेतों को अन्य तंत्र ग्रन्थों से विस्तार पूर्वक समझाकर तथा पूर्ण प्रामाणिक विधि देकर उनके लिये राजमार्ग खोल दिया है । **मूल्य 100 रु०**

महामृत्युंजय

साधना एवं सिद्धि

घोर कष्टों एवं अचानक मृत्यु का निवारण और मानसिक शांति की उपलब्धि ।

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी **मूल्य 40 रु०**

सभी प्रकार के प्रामाणिक यंत्र भी उपलब्ध हैं । सूची के लिये पत्र लिखकर मंगायें

रंजन पब्लिकेशन्स

16, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002